स्वच्छ भारत
एक कदम स्वच्छता की ओर

दिसंबर, 2020
I.S.S.N. : 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

संपादक-मंडल

डा. जी. नारायण राजू,
सचिव, विधायी विभाग

डा. रीटा वशिष्ठ, अपर सचिव,
विधायी विभाग, प्रभारी, वि.सा.प्र.

श्री एस. आर. ढलेटा,
सेवानिवृत्त संयुक्त सचिव एवं
विधायी परामर्शी, विधायी विभाग

डा. सुरेन्द्र कुमार शर्मा, प्रिन्सिपल,
विधि विभाग, डी आई आर डी, गुरु
गोविंद सिंह इन्द्रप्रस्थ विश्वविद्यालय

श्री ए. के. अवस्थी,
सेवानिवृत्त प्रोफेसर एवं डीन, विधि
संकाय लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ

श्री एल. आर. सिंह,
प्रोफेसर एवं डीन, इलाहाबाद
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

श्री कृष्ण गोपाल अग्रवाल,
सेवानिवृत्त संपादक, वि.सा.प्र.

श्री अनुराग दीप,
एसोसिएट प्रोफेसर,
भारतीय विधि संस्थान

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय,
प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त,
संपादक

श्री अविनाश शुक्ला,
संपादक

श्री असलम खान,
संपादक

सहायक संपादक : श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक : सर्वश्री महीपाल सिंह और जसवन्त सिंह

ISSN 2457-0478

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 125/-

वार्षिक : ₹ 1,300/-

© 2020 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा.................................. द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0478

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

दिसम्बर, 2020 अंक - 12

प्रधान संपादक

डा. मिथिलेश चन्द्र पांडेय

संपादक

अविनाश शुक्ला

सत्यमेव जयते

विधि साहित्य प्रकाशन

(2020) 2 सि. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन

विधायी विभाग

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on

Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001.
दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्च न्यायालयों द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो अधिवक्ताओं, विधि छात्रों, न्यायाधीशों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से मैं आपका ध्यान माननीय इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा **विभोर वैभव इंफ्राहोम्स प्राइवेट लिमिटेड** बनाम **भारत संघ और अन्य** (2020) 2 सि. नि. प. 629 वाले मामले की तरफ आकर्षित करना चाहता हूं । इस मामले में माननीय उच्च न्यायालय द्वारा भू-संपदा (विनियम और विकास) अधिनियम, 2016 की धारा 18, 2(भक), 2(झ) और 71 के उपबंधों का अवलंब लेते हुए अभिनिर्धारित किया कि भवन परियोजना के संप्रवर्तक द्वारा समयानुसार फ्लैट का कब्जा प्रदान न किए जाने की स्थिति में फ्लैट के क्रेता को यह अधिकार है कि वह जमा रकम पर ब्याज और समयानुसार कब्जा न दिए जाने के आधार पर प्रतिकर का दावा कर सके । परियोजना संप्रवर्तक ने भवन क्रेता को संपत्ति विक्रय करार के आधार पर 30 माह की अवधि के भीतर फ्लैट का कब्जा हस्तगत करने का करार किया था । इस करार में 180 दिनों की अतिरिक्त अवधि भी उपबंधित की गई थी अत: भवन संप्रवर्तक फ्लैट क्रेता को कुल 36 माह अर्थात् तीन वर्ष की अवधि के भीतर फ्लैट का कब्जा समस्त कार्यों को पूर्ण करने के उपरांत हस्तगत करने का दायी था । किंतु परियोजना संप्रवर्तक ने सहमत समयावधि के भीतर समस्त कार्य पूर्ण करके फ्लैट का कब्जा क्रेता को प्रदान नहीं किया और इस प्रकार उसने भू-संपदा (विनियम और विकास) अधिनियम, 2016 की धारा 18 के उपबंधों का अतिक्रमण किया । अत: फ्लैट क्रेता ने उत्तर प्रदेश भू-संपदा विनियामक प्राधिकरण के समक्ष आवेदन फाइल किया और प्रतिकर

और उस पर ब्याज का दावा किया । प्राधिकरण ने आदेश पारित करते हुए अभिनिर्धारित किया कि फ्लैट क्रेता को न्यायनिर्णायक प्राधिकारी की शरण लेनी चाहिए । अत: यह मामला अधिनियम की धारा 71 के अधीन न्यायनिर्णायक प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत हुआ । न्यायनिर्णायक प्राधिकारी ने आदेश पारित करते हुए प्रतिकर और उस पर ब्याज के संदाय का आदेश पारित कर दिया ।

पत्रिका में समायोजित सामग्री और गुणवत्ता के संबंध में सभी पाठकों के विचार अपेक्षित हैं । अगली पत्रिका के संपादन के समय उनके विचारों पर ध्यान दिया जाएगा ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका

दिसंबर, 2020

निर्णय-सूची

पृष्ठ संख्या

एस. के. इंडस्ट्रीज (मैसर्स) **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 656

के. मधुसूदन नायडू **बनाम** आंध्र प्रदेश राज्य 613

गैमन इंडिया लिमिटेड और एक अन्य **बनाम** भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण 692

महेश चंद्र भारद्वाज **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य 643

रेवा पाण्डेय **बनाम** रमेश 667

विभोर वैभव इंफ्राहोम्स प्राइवेट लिमिटेड **बनाम** भारत संघ और अन्य 629

सविथरम्मा **बनाम** नागरत्ना और अन्य 678

संसद् के अधिनियम

स्त्री अशिष्ट रूपण (प्रतिषेध) अधिनियम, 1986 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ 1 – 7

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का 10)

– धारा 3 [सपठित 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश का खंड 8(4)] – उचित मूल्य की दुकान के रद्दकरण का प्राधिकार – उचित मूल्य की दुकान के डीलर के विरुद्ध खाद्यान की मात्रा में फेरफार, धनिक लाभ के लिए चोरी-छिपे कारबार में अंतर्वलित होने और विनिर्दिष्ट पते पर दुकान के संचालन में विफल रहने के आरोप विरचित किया जाना – डीलर का विनिर्दिष्ट अभिवाक् कि अस्थायी डीलर, जो उसके अवकाश की अवधि के दौरान दुकान का संचालन कर रहा था, ने सुरक्षित स्टाक हस्तगत नहीं किया – अस्थायी डीलर का परीक्षण न किया जाना – इस बाबत कोई विनिर्दिष्ट निष्कर्ष न निकाला जाना कि चावल की बिक्री काले बाजार में की गई – पंचनामा को इस बाबत एकमात्र आधार माना जाना कि डीलर दुकान का संचालन किसी अन्यत्र स्थान पर कर रहा था – डीलर से स्पष्टीकरण प्राप्त होने के पश्चात् नियंत्रण आदेश के अंतर्गत अनुध्यात जांच का संचालन न किया जाना और डीलर द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण अस्वीकृत किए जाने के किसी सुदृढ़ कारण का उल्लेख न किया जाना – अतः, उचित मूल्य की दुकान के प्राधिकार का रद्दकरण अपास्त किए जाने योग्य है ।

के. मधुसूदन नायडू बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** 613

उत्तर प्रदेश नगरपालिका अधिनियम, 1916 (1916 का उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 2)

– धारा 48 – निर्वाचित अध्यक्ष के मामले में पद से

पृष्ठ संख्या

हटाए जाने की प्रक्रिया 1916 के अधिनियम की धारा 48 के अधीन विहित है और परिणामस्वरूप जब कभी भी अध्यक्ष को उसके निर्वाचित पद से हटाए जाने के संबंध में कोई विवाद्यक उद्भूत होता है, तो कानूनी उपबंध के अधीन विहित प्रक्रिया का कड़ाईपूर्वक पालन किया जाना अपेक्षित होता है ।

महेश चंद्र भारद्वाज बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 643

भू-संपदा (विनियम और विकास) अधिनियम, 2016 (2016 का 16)

– धारा 18, 2 (भ.क.), 2 (झ), और 71 – संप्रवर्तक द्वारा क्रेताओं को संपत्ति का कब्जा समयानुसार प्रदान न किया जाना – संपत्ति क्रेताओं द्वारा परियोजना में जमा रकम वापस प्राप्त न किया जाना, बल्कि उनके द्वारा फ्लैट का समयानुसार कब्जा हस्तगत किए जाने में विलंब के कारण प्राधिकरण के समक्ष प्रतिकर और ब्याज दिलाए जाने का अनुरोध किया जाना और प्राधिकरण द्वारा प्रतिकर और ब्याज का अनुतोष प्रदान किया जाना – प्राधिकरण को कब्जे में विलंब के आधार पर संपत्ति क्रेता को प्रतिकर और ब्याज दिलाने का अधिकार है ।

विभोर वैभव इंफ्राहोम्स प्राइवेट लिमिटेड बनाम **भारत संघ और अन्य** 629

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26)

– धारा 9 – न्यायालय द्वारा अंतरिम अनुतोष प्रदान

पृष्ठ संख्या

किया जाना – पक्षों द्वारा अनेक माध्यस्थम् कार्यवाहियां फाइल किया जाना – पक्षों से यह अपेक्षित होता है कि वे माध्यस्थम् कार्यवाहियों का अवलंब सद्भाविक रूप से लें – कार्यवाहियों की गुणज़ता और असंगत/परस्पर विरोधी पंचाट कार्यवाहियों से बचने के प्रयोजनार्थ यह आवश्यक है कि किसी भी पक्ष द्वारा धारा 9 के अधीन फाइल की गई याचिका में इस बात का उल्लेख अवश्य किया जाना चाहिए कि समान वाद कारण के आधार पर कोई अन्य याचिका फाइल नहीं की गई है ।

गैमन इंडिया लिमिटेड और एक अन्य बनाम **भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण** 692

– धारा 9 – न्यायालय द्वारा अंतरिम अनुतोष प्रदान किया जाना – कोई पक्षकार माध्यस्थम् कार्यवाहियों के पूर्व या उसके दौरान या माध्यस्थम् पंचाट पारित किए जाने के पश्चात् किसी भी समय, किंतु माध्यस्थम् पंचाट के प्रवृत्त किए जाने के पूर्व अंतरिम अनुतोष प्राप्त करने के लिए न्यायालय की शरण ले सकता है ।

गैमन इंडिया लिमिटेड और एक अन्य बनाम **भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण** 692

– धारा 11 और 30 – उच्च न्यायालय द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति के पूर्व विवाद के पक्षों द्वारा संबंधित प्राधिकारियों के समक्ष समझौते के लिए आवेदन प्रस्तुत किया जाना – 1996 के अधिनियम की धारा 30 का उद्देश्य और प्रयोजन माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा

पृष्ठ संख्या

कार्यवाहियों के लंबन के दौरान माध्यस्थम्, सुलह और अन्य प्रक्रियाओं का प्रयोग करते हुए विवाद के निपटारों को प्रोत्साहित करना है – विवाद को माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट नहीं किया गया और कोई माध्यस्थम् कार्यवाही लंबित नहीं है, इसलिए वर्तमान प्रक्रम पर विवाद के निपटारे और माध्यस्थम् पंचाट तैयार किए जाने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता ।

एस. के. इंडस्ट्रीज (मैसर्स) बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 656

– धारा 34 – माध्यस्थम् पंचाट अपास्त किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन फाइल किया जाना – पंचाट अपास्त किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल की गई याचिका की सुनवाई करते हुए न्यायालय के लिए यह अभिनिर्धारित करना असंगत होगा कि किसी पश्चात्वर्ती पंचाट में निकाले गए निष्कर्ष के आधार पर पूर्ववर्ती पंचाट विधिविरुद्ध हो गया है – पंचाट का परीक्षण उस तारीख को आधार मानते हुए किया जाना चाहिए, जब उसको मामले के गुणागुण के आधार पर उद्घोषित किया गया, न कि किसी पश्चात्वर्ती माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित पश्चात्वर्ती निष्कर्षों के आधार पर ।

गैमन इंडिया लिमिटेड और एक अन्य बनाम **भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण** 692

– धारा 34 – माध्यस्थम् पंचाट अपास्त किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन – याची ठेकेदार और प्रत्यर्थी प्राधिकरण के मध्य विलंब के कारण नुकसान, दरों में

पृष्ठ संख्या

बढ़ोतरी और पुनरीक्षण के बाबत विवाद – ठेकेदार द्वारा यह अभिवाक् किया जाना कि विलंब के कारण नुकसान और दरों में बढ़ोतरी और पुनरीक्षण के बाबत प्रस्तुत किए गए दावे सुभिन्न प्रकृति के दावे होते हैं, जिनका न्यायनिर्णयन अलग-अलग फाइल किए गए दावों में किया जा सकता है ।

गैमन इंडिया लिमिटेड और एक अन्य बनाम **भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण** 692

संविधान, 1950

– अनुच्छेद 243थ (भाग 9-क) – नगरपालिकाएं – निर्वाचित पदधारक निर्वाचक मंडल को जवाबदेह होता है और उसको उसके निर्वाचित पद से हटाए जाने के दुष्परिणाम गंभीर और प्रतिकूल प्रकृति के होते हैं – निर्वाचित पदधारक का अधिकार निःसंदेह रूप से कानूनी अधिनियमिति के निबंधनों के अंतर्गत होता है और उसे पद से हटाए जाने की कार्रवाई भी की जा सकती है, किंतु केवल विधानमंडल द्वारा अधिकथित उपबंधों के कड़ाईपूर्वक पालन के पश्चात् ।

महेश चंद्र भारद्वाज बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** 643

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5)

– आदेश 1, नियम 10 – वादग्रस्त संपत्ति के सह-स्वामी के विरुद्ध निष्कासन और स्थायी व्यादेश के लिए वाद फाइल किया जाना – सह-स्वामी की मृत्यु के पश्चात् एकमात्र जीवित विधिक उत्तराधिकारी द्वारा वाद

पृष्ठ संख्या

में पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के लिए आवेदन फाइल किया जाना – सह-स्वामी का एकमात्र उत्तरजीवी विधिक उत्तराधिकारी वाद का आवश्यक पक्ष है और वाद में अंतर्वलित प्रश्नों के विनिर्धारण के लिए पक्ष बनने का हकदार है ।

रेवा पाण्डेय बनाम **रमेश** 667

– आदेश 18, नियम 17 – न्यायालय द्वारा साक्षी को परीक्षा के प्रयोजनार्थ पुन: बुलाया जाना – वादी द्वारा विभाजन और पृथक् कब्जे के दावे में साक्ष्य बंद किए जाने वाले आदेश को वापस लिए जाने और उसके साक्षी को पुन: मुख्य परीक्षा का अवसर प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रार्थनापत्र प्रस्तुत किया जाना – वादी द्वारा ये प्रार्थनापत्र विचारण के अंतिम प्रक्रम पर, जब वाद बहस के लिए निर्धारित किया जा चुका था, प्रस्तुत किया जाना – आवेदन में किसी संतोषजनक और तर्कपूर्ण कारण का उल्लेख न किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा आवेदन को अस्वीकार किया जाना उचित है ।

सविथरम्मा बनाम **नागरत्ना और अन्य** 678

के. मधुसूदन नायडू

बनाम

आंध्र प्रदेश राज्य

(2020 की रिट याचिका संख्या 7874)

तारीख 20 मई, 2020

न्यायमूर्ति कोंगड़ा विजयलक्ष्मी

आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 (1955 का 10) – धारा 3 [सपठित 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश का खंड 8(4)] – उचित मूल्य की दुकान के रद्दकरण का प्राधिकार – उचित मूल्य की दुकान के डीलर के विरुद्ध खाद्यान की मात्रा में फेरफार, धनिक लाभ के लिए चोरी-छिपे कारबार में अंतर्वलित होने और विनिर्दिष्ट पते पर दुकान के संचालन में विफल रहने के आरोप विरचित किया जाना – डीलर का विनिर्दिष्ट अभिवाक् कि अस्थायी डीलर, जो उसके अवकाश की अवधि के दौरान दुकान का संचालन कर रहा था, ने सुरक्षित स्टाक हस्तगत नहीं किया – अस्थायी डीलर का परीक्षण न किया जाना – इस बाबत कोई विनिर्दिष्ट निष्कर्ष न निकाला जाना कि चावल की बिक्री काले बाजार में की गई – पंचनामा को इस बाबत एकमात्र आधार माना जाना कि डीलर दुकान का संचालन किसी अन्यत्र स्थान पर कर रहा था – डीलर से स्पष्टीकरण प्राप्त होने के पश्चात् नियंत्रण आदेश के अंतर्गत अनुध्यात जांच का संचालन न किया जाना और डीलर द्वारा प्रस्तुत स्पष्टीकरण अस्वीकृत किए जाने के किसी सुदृढ़ कारण का उल्लेख न किया जाना – अतः, उचित मूल्य की दुकान के प्राधिकार का रद्दकरण अपास्त किए जाने योग्य है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य ये हैं कि यह रिट याचिका जिला अनंथपुरामू के पेड्डावडूगुरु मंडल के कृस्तिपडू ग्राम स्थित उचित मूल्य की दुकान के बाबत याची के प्राधिकार के रद्दकरण को चुनौती देते हुए फाइल की गई है । याची का पक्षकथन यह है कि उसकी नियुक्ति वर्ष 2003 में स्थायी उचित मूल्य की दुकान के डीलर के रूप में की गई थी । तारीख 3 दिसंबर, 2019 को जिला सिविल आपूर्ति विभाग के अधिकारियों ने तृतीय प्रत्यर्थी के साथ याची की उचित मूल्य की दुकान का निरीक्षण किया, आवश्यक वस्तुओं की कतिपय मात्रा जब्त की और पंचनामा संचालित किया । उक्त पंचनामे के अनुसार चावल, चीनी और लाल चने की मात्रा में फेरफार पाया गया । तृतीय प्रत्यर्थी ने स्थानीय नेताओं के आग्रह पर आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 6-क के अधीन कार्यवाही आरंभ की, जिसकी सूचना तारीख 4 दिसंबर, 2019 के पत्र द्वारा प्रत्यर्थी को दी गई । उक्त सूचना के आधार पर संचालित जांच रिपोर्ट (कागज संख्या 6-क) का अवलंब लेते हुए द्वितीय प्रत्यर्थी ने याची के उचित मूल्य की दुकान के प्राधिकार को तारीख 6 मार्च, 2020 को रद्द कर दिया । याची का पक्षकथन है कि सरकार द्वारा जारी तारीख 28 सितंबर, 2015 के ज्ञापन संख्या 21/100/2015-ए. डी. आई. पी. पी. - सी. सी. एस. के खंड 'क्यू.' के अनुसार उचित मूल्य की दुकान का प्राधिकार जांच रिपोर्ट 6-क का अवलंब लेते हुए द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा रद्द नहीं किया जा सकता था । अत: वर्तमान रिट याचिका फाइल की गई । रिट याचिका का निपटारा करते हुए,

अभिनिर्धारित – डीलर द्वारा इस बाबत विनिर्दिष्ट अभिवाक् किया गया है कि अस्थायी डीलर, जिसने उक्त अवधि के दौरान स्टाक का धारक होने के नाते सुरक्षित स्टाक हस्तगत नहीं किया, का परीक्षण किया जाना चाहिए, किंतु ऐसा नहीं किया गया । जहां तक द्वितीय आरोप का संबंध है, यह निष्कर्ष निकाला गया है कि उसने 192 किग्रा. चावल काले बाजार में भेज दिया था और चोरी-छिपे काले कारबार में अंतर्वलित था । यद्यपि इस आरोप से इनकार किया गया है, फिर भी द्वितीय आरोप के संबंध में न तो कोई चर्चा की गई है और न ही

कोई निष्कर्ष निकाला गया है, सिवाय यह कहने कि स्पष्टीकरण असत्य है । यद्यपि आक्षेपित आदेश से यह दर्शित होता है कि दोनों ही आरोपों का साबित होना अभिनिर्धारित किया गया है, फिर भी काले बाजार में चावल भेजे जाने के संबंध में कोई विनिर्दिष्ट निष्कर्ष नहीं है । जहां तक तृतीय आरोप का संबंध है कि वह उचित मूल्य की दुकान अन्यत्र चला रहा था, यह निष्कर्ष निकाला गया है कि स्पष्टीकरण संतोषप्रद नहीं है और सतर्कता और राजस्व प्राधिकारियों ने पंचनामा में उल्लेख किया है कि डीलर उचित मूल्य की दुकान अन्यत्र चला रहा है । पंचनामा किसी अन्य समर्थनकारी साक्ष्य के बिना भी इस निष्कर्ष पर पहुंचने का आधार है कि डीलर उचित मूल्य की दुकान अन्यत्र चला रहा है । 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश के खंड 8(4) प्राधिकार के निलंबन और रद्दकरण पर विचार करता है । उक्त खंड के अनुसार नियुक्ति प्राधिकारी किसी भी समय बिंदु पर जनहित में या स्वप्रेरणा से या कोई शिकायत प्राप्त होने पर वह जांच संचालित करने, जैसाकि आवश्यक प्रतीत किया जाए और लिखित में कारणों को अभिलिखित किए जाने के पश्चात् उसको जारी या उसको जारी किए जाने की उपधारणा के अधीन/इस खंड के अधीन उसको जारी प्राधिकार को निलंबित या रद्द कर सकता है । इस खंड में प्रयोग किए गए शब्द 'वह जांच करने के पश्चात्' और 'लिखित में अभिलिखित कारणोंवश' हैं । उक्त खंड नियुक्ति प्राधिकारी को किसी शास्ति को अधिरोपित करने के पहले, जैसाकि इसमें परिकल्पित किया गया है, दो आज्ञापक शर्तों का पालन करने के लिए आनत करता है । प्रथम यह कि वह 'जांच' करेगा जैसाकि आवश्यक प्रतीत किया जाए और द्वितीय, वह 'लिखित में कारण' अभिलिखित करेगा । ऑक्सफोर्ड शब्दकोष शब्द रचना के अनुसार 'जांच' शब्द के अर्थ में परीक्षण, परीक्षा, पता लगाना, गहराई में जाना इत्यादि सम्मिलित हैं । यद्यपि याची के विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि आक्षेपित आदेश रिपोर्ट 6-क के आधार पर पारित किया गया है, जैसाकि आक्षेपित आदेश से दर्शित होता है, फिर भी यह आक्षेपित आदेश रिपोर्ट 6-क पर आधारित नहीं है किंतु यह आक्षेपित आदेश अन्य आरोपों के आधार पर

भी पारित किया गया है । इसलिए, याची के विद्‌वान् काउंसेल की उक्त दलील अस्वीकृत किए जाने योग्य है । (पैरा 8, 9 और 18)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2015]	2015 (3) एल. डी. 617 : **बी. मंजूला** बनाम **जिला कलक्टर, जिला आपूर्ति और अन्य** ;	10
[2015]	2015 (2) ए. एल. टी. 667 : **पिडीकिती सैलजा** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ;	4
[2011]	2011 (2) ए. एल. डी 477 : **कोंडामुडी बनर्जी** बनाम **राजस्व क्षेत्रीय अधिकारी, ओंगल** ;	11
[2010]	(2010) 2 एस. सी. सी. 497 : **जी. वल्लीकुमारी** बनाम **आंध्रा एजुकेशन सोसाइटी और अन्य** ;	13
[1966]	ए. आई. आर.1966 एस. सी. 671 : **मध्य प्रदेश इंडस्ट्रीज लिमिटेड** बनाम **भारत संघ** ।	12

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2020 की रिट याचिका संख्या 7874.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से	श्री के. श्रीनिवास
प्रत्यर्थियों की ओर से	सिविल आपूर्ति विभाग की तरफ से सरकारी प्लीडर

आदेश

न्यायमूर्ति कोंगड़ा विजयलक्ष्मी – याची के विद्‌वान् काउंसेल और विद्‌वान् सरकारी प्लीडर को सुना और उनकी सहमति से इस रिट याचिका का निस्तारण ग्रहण किए जाने के प्रक्रम पर किया जा रहा है ।

2. यह रिट याचिका जिला अनंथपुरामू के पेड्डावडूगुरु मंडल के

कृस्तिपडू ग्राम में स्थित उचित मूल्य की दुकान संख्या 1207027 के संबंध में याची के प्राधिकार के रद्दकरण को चुनौती देते हुए फाइल की गई है ।

3. याची का पक्षकथन यह है कि उसको वर्ष 2003 में स्थायी उचित मूल्य की दुकान के डीलर के रूप में नियुक्त किया गया था, तारीख 3 दिसंबर, 2019 को जिला सिविल आपूर्ति विभाग के अधिकारियों ने तृतीय प्रत्यर्थी के साथ याची की उचित मूल्य की दुकान का निरीक्षण किया, आवश्यक वस्तुओं की कतिपय मात्रा जब्त की और पंचनामा संचालित किया, उक्त पंचनामे के अनुसार चावल, चीनी और लाल चने की मात्रा में फेरफार पाया गया, तृतीय प्रत्यर्थी ने स्थानीय नेताओं के आग्रह पर आवश्यक वस्तु अधिनियम की धारा 6-क के अधीन कार्यवाही आरंभ की और उसकी सूचना तारीख 4 दिसंबर, 2019 के पत्र द्वारा प्रत्यर्थी को दी, उक्त रिपोर्ट 6 का अवलंब लेते हुए द्वितीय प्रत्यर्थी ने याची के उचित मूल्य की दुकान के प्राधिकार को तारीख 6 मार्च, 2020 को रद्द कर दिया, तारीख 28 सितंबर, 2015 के ज्ञापन संख्या 21/100/2015-ए. डी. आई. पी. पी.-सी. सी. एस. में सरकार द्वारा जारी ज्ञापन के खंड 'क्यू.' के अनुसार उचित मूल्य की दुकान का प्राधिकार रिपोर्ट 6-क का अवलंब लेते हुए द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा रद्द नहीं किया जा सकता । अतः वर्तमान रिट याचिका फाइल की गई ।

4. याची की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल श्री के. श्रीनिवास ने रिट याचिका के समर्थन में फाइल किए गए शपथपत्र में दी गई दलीलों को दोहराया । उन्होंने अपने पक्षकथन के समर्थन में **सी. दुर्गा श्रीनिवास राव** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** (2015 की रिट याचिका संख्या 30126) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा तारीख 25 जनवरी, 2006 को दिए गए विनिश्चय और **पिडीकिती सैलजा** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले का अवलंब लिया ।

5. सिविल आपूर्ति विभाग की ओर से उपस्थित विद्वान् सरकारी

[1] 2015 (2) ए. एल. टी. 667.

प्लीडर ने निवेदन किया कि याची को 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश के खंड 24(ख) के अनुसार जिला कलक्टर के समक्ष अपील का प्रभावी वैकल्पिक अनुतोष उपलब्ध है और वर्तमान रिट याचिका उस अनुतोष का आश्रय लिए बिना फाइल की गई है और याची के स्थान पर अस्थायी डीलर नियुक्त किए जाने के द्वारा आनुकल्पिक इंतजाम भी किए जा चुके हैं ।

6. जैसाकि तारीख 6 मार्च, 2020 के आक्षेपित आदेश से स्पष्ट है, इस मामले के याची के विरुद्ध तीन आरोप विरचित किए गए हैं । याची को कारण बताओ सूचना भी जारी की गई थी, उससे स्पष्टीकरण की अपेक्षा की गई थी और आक्षेपित आदेश में निष्कर्ष भी अभिलिखित किए गए हैं । आरोप, याची का स्पष्टीकरण और द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा निकाले गए निष्कर्ष निम्नलिखित हैं :-

> "**आरोप संख्या 1** : यह कि उचित मूल्य की दुकान का डीलर उचित मूल्य की दुकान में इलैक्ट्रानिक उपकरण में दर्शित अधिशेष के अनुसार अनुसूचित वस्तुओं को भौतिक रूप से रखने में विफल रहा । उचित मूल्य की दुकान में निरीक्षण के समय चावल में 19.319 किग्रा. की कमी, चीनी में 8.1 किग्रा. की कमी और आर. जी. दाल में 0.645 किग्रा. की कमी पाई गई, जो 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश का अतिक्रमण है ।
>
> **डीलर का स्पष्टीकरण** : उचित मूल्य की दुकान के डीलर ने अपने काउंसेल के माध्यम से अपना स्पष्टीकरण यह अभिकथित करते हुए प्रस्तुत किया कि वह अवकाश पर था और उसने अवकाश व्यतीत हो जाने के पश्चात् उचित मूल्य की दुकान के डीलर के रूप में पदभार ग्रहण कर लिया था और माह नवंबर, 2019 के लिए उसके पक्ष में आवश्यक वस्तुओं का निर्मुक्ति आदेश जारी किया गया था । किंतु वह व्यक्ति, जिसने उसके अवकाश पर रहने की अवधि के दौरान अस्थायी डीलर के रूप में कार्य किया, ने 458 किग्रा. और 33 किग्रा. चीनी का सुरक्षित भंडार उसको हस्तगत नहीं किया । निरीक्षण के दौरान निरीक्षण प्राधिकारियों ने उसके विरुद्ध

6-क का मामला उसके अभिवाक् पर विचार किए बिना फाइल किया है ।

आरोप संख्या 2 : यह कि उचित मूल्य की दुकान के डीलर ने 193.19 किग्रा. चावल काले बाजार में भेज दिया था और खामोशी के साथ अपने मौद्रिक लाभ के लिए कारबार में अंतर्वलित रहा, जो 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश के खंड 25(घ) का अतिक्रमण है ।

डीलर का स्पष्टीकरण : उचित मूल्य की दुकान के डीलर ने अपने काउंसेल के माध्यम से अपना स्पष्टीकरण यह अभिकथित करते हुए प्रस्तुत किया है कि वह आरोप पत्र में किए गए अभिकथनों से इनकार करता है और वे असत्य हैं । उसने आगे निवेदन किया कि उसने कार्ड धारकों को आवश्यक वस्तुओं का वितरण उचित रीति में किया है और उसके द्वारा वसूले गए प्रभार आरोप संख्या 4 के साथ संबद्ध हैं और वह किसी भी प्रकार से चोरी-छिपे किसी कारबार में अंतर्वलित नहीं है और निरीक्षण प्राधिकारियों ने मात्र अनुमान के आधार पर उसके विरुद्ध ये आरोप लगाए हैं और डीलर ने किसी भी कार्यभार का अतिक्रमण नहीं किया ।

आरोप संख्या 1 और 2 के निष्कर्ष : डीलर द्वारा फाइल किया गया स्पष्टीकरण संतुष्ट करने वाला नहीं है । यदि उचित मूल्य के दुकान के डीलर द्वारा प्रस्तुत किए गए स्पष्टीकरण पर इस बाबत विचार किया जाता है कि अवकाश की अवधि के दौरान कार्यरत अस्थायी डीलर ने पूर्ववर्ती माह का सुरक्षित स्टाक अर्थात् 458 किग्रा. चावल और 33 किग्रा. चीनी का स्टाक हस्तगत नहीं किया था और अंतिम स्टाक के आंकड़ों को सम्मिलित किए जाने पर यह मात्रा 265 किग्रा. चावल की हो जाती है, जो 193.19 किग्रा. की कमी के बजाय अधिक है, पुन: चीनी की मात्रा 25.9 किग्रा. हो जाती है, जो 8.1 किग्रा. कमी के बजाय अधिक है ।

इसलिए प्रत्यर्थी द्वारा फाइल किया गया स्पष्टीकरण असत्य है । इसलिए आरोप संख्या 1 और 2 का साबित होना अभिनिर्धारित किया जाता है ।

आरोप संख्या 3 : यह कि उचित मूल्य की दुकान का डीलर उचित मूल्य की दुकान का संचालन विनिर्दिष्ट पते, जैसा कि प्राधिकार प्रदान किए जाने वाले पत्र में उल्लिखित है, पर करने में विफल रहा और वह उचित मूल्य की दुकान का संचालन प्राधिकार प्रदान करने वाले पत्र में उल्लिखित दुकान संख्या 2/170 के बजाय दुकान संख्या 2/134 में कर रहा है, जो प्राधिकार प्रदान करने वाले पत्र में समाविष्ट शर्त 17(ग) का अतिक्रमण है ।

डीलर का स्पष्टीकरण : उचित मूल्य की दुकान के डीलर ने अपना स्पष्टीकरण अपने काउंसेल के माध्यम से यह अभिकथित करते हुए प्रस्तुत किया है कि वह अपनी उचित मूल्य की दुकान का संचालन प्राधिकार प्रदान करने वाले पत्र में उल्लिखित विनिर्दिष्ट पते पर कर रहा है और निरीक्षण करने वाले प्राधिकारियों ने यह आरोप मात्र अनुमान के आधार पर लगाया है और उसने किसी भी खंड का अतिलंघन नहीं किया ।

निष्कर्ष : प्रत्यर्थी द्वारा प्रस्तुत किया गया स्पष्टीकरण संतोषप्रद नहीं है । निरीक्षण करने वाले प्राधिकारियों अर्थात् सतर्कता और राजस्व प्राधिकारियों ने पंचनामा में स्पष्टत: उल्लेख किया है कि डीलर दुकान संख्या 2/170 के बजाय दुकान संख्या 2/134 में उचित मूल्य की दुकान चला रहा है । निरीक्षण के दौरान डीलर ने मौखिक रूप से या अपने लिखित कथन में विनिर्दिष्ट पते, जैसाकि प्राधिकार प्रदान करने वाले पत्र में उल्लिखित है, पर उचित मूल्य की दुकान का संचालन न किए जाने के बारे में खंडन कभी नहीं किया । अत: आरोप संख्या 3 को साबित अभिनिर्धारित किया जाता है ।"

7. जैसाकि आरोपों से दृश्यमान है, प्रथम आरोप में यह अभिकथित किया गया है कि डीलर उचित मूल्य की दुकान में इलैक्ट्रानिक उपकरण

में दर्शित अधिशेषों के अनुसार अनुसूचित वस्तुओं को भौतिक रूप से बनाए रखने में विफल रहा और वह इसी कारण चावल, चीनी और दाल की कमी दर्शित हो रही है, जो 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश के खंड 12(ङ)(3) का अतिक्रमण है । इसके लिए डीलर ने यह स्पष्टीकरण दिया है कि उसने अवकाश के लिए आवेदन किया था और उसने अवकाश के व्यतीत हो जाने के पश्चात् उचित मूल्य की दुकान के डीलर के रूप में कार्यभार ग्रहण कर लिया और उसके पक्ष में माह नवंबर, 2019 में निर्मुक्ति आदेश जारी कर दिया गया था, किंतु अवकाश के दौरान उसके स्थान पर कार्यरत अस्थायी डीलर ने 458 किग्रा. चावल और 33 किग्रा. चीनी का सुरक्षित स्टाक हस्तगत नहीं किया और इसी कारणवश निरीक्षण के दौरान उसके अभिवाक् पर विचार नहीं किया गया । द्वितीय आरोप यह है कि याची ने 193.19 किग्रा. चावल काले बाजार में भेज दिया था और वह चोरी-छिपे काले बाजार के कारबार में अंतर्वलित हो गया था, जो 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश के खंड 25(घ) का अतिक्रमण है । द्वितीय आरोप के संबंध में उसने यह स्पष्टीकरण दिया है कि वह चोरी-छिपे किसी काले बाजार के कारबार में अंतर्वलित नहीं हुआ था और निरीक्षण करने वाले प्राधिकारी उसके विरुद्ध मात्र अनुमान के आधार पर अग्रसर हो गए थे । प्रथम दोनों आरोपों के बाबत जो निष्कर्ष निकाले गए, वे यह हैं कि याची द्वारा फाइल किया गया स्पष्टीकरण संतोषप्रद नहीं है और यदि पूर्ववर्ती डीलर ने पूर्ववर्ती माह का सुरक्षित स्टाक हस्तगत नहीं किया था, तो चावल के 193.19 किग्रा. के भंडारण के बजाय 165 किग्रा. का भंडारण होना चाहिए और चीनी का भंडारण 8.1 किग्रा. के बजाय 25.9 किग्रा. होना चाहिए और इस स्पष्टीकरण पर अविश्वास करते हुए यह अभिनिर्धारित किया गया कि दोनों ही आरोप साबित पाए जाते हैं । जहां तक तीसरे आरोप का संबंध, डीलर उचित मूल्य की दुकान के चालन का प्राधिकार प्रदान करने वाले पत्र में उल्लिखित विनिर्दिष्ट पते पर करने में विफल रहा है और उसका स्पष्टीकरण यह है कि वह दुकान को उसी पते पर चला रहा है जिसका उल्लेख प्राधिकार प्रदान करने वाले पत्र में किया गया है और

उक्त आरोप के संबंध में यह निष्कर्ष निकाला गया कि स्पष्टीकरण संतोषप्रद नहीं है और सतर्कता और राजस्व प्राधिकारियों ने पंचनामा में स्पष्टत: उल्लेख किया है कि डीलर उचित मूल्य की दुकान कहीं अन्यंत्र चला रहा है और डीलर ने निरीक्षण के दौरान इस तथ्य से इनकार नहीं किया और यह अभिनिर्धारित किया गया कि तृतीय आरोप भी साबित हो गया है ।

8. डीलर द्वारा इस बाबत विनिर्दिष्ट अभिवाक् किया गया है कि अस्थायी डीलर, जिसने उक्त अवधि के दौरान स्टाक का धारक होने के नाते सुरक्षित स्टाक हस्तगत नहीं किया, का परीक्षण किया जाना चाहिए, किंतु ऐसा नहीं किया गया । जहां तक द्वितीय आरोप का संबंध है, यह निष्कर्ष निकाला गया है कि उसने 192 किग्रा. चावल काले बाजार में भेज दिया था और चोरी-छिपे काले कारबार में अंतर्वलित था । यद्यपि इस आरोप से इनकार किया गया है, फिर भी द्वितीय आरोप के संबंध में न तो कोई चर्चा की गई है और न ही कोई निष्कर्ष निकाला गया है, सिवाय यह कहने कि स्पष्टीकरण असत्य है । यद्यपि आक्षेपित आदेश से यह दर्शित होता है कि दोनों ही आरोपों का साबित होना अभिनिर्धारित किया गया है, फिर भी काले बाजार में चावल भेजे जाने के संबंध में कोई विनिर्दिष्ट निष्कर्ष नहीं है । जहां तक तृतीय आरोप का संबंध है कि वह उचित मूल्य की दुकान अन्यत्र चला रहा था, यह निष्कर्ष निकाला गया है कि स्पष्टीकरण संतोषप्रद नहीं है और सतर्कता और राजस्व प्राधिकारियों ने पंचनामा में उल्लेख किया है कि डीलर उचित मूल्य की दुकान अन्यत्र चला रहा है । पंचनामा किसी अन्य समर्थनकारी साक्ष्य के बिना भी इस निष्कर्ष पर पहुंचने का आधार है कि डीलर उचित मूल्य की दुकान अन्यत्र चला रहा है ।

9. 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश के खंड 8(4) प्राधिकार के निलंबन और रद्दकरण पर विचार करता है । उक्त खंड के अनुसार नियुक्ति प्राधिकारी किसी भी समय बिंदु पर जनहित में या स्वप्रेरणा से या कोई शिकायत प्राप्त होने पर वह जांच संचालित करने, जैसाकि आवश्यक प्रतीत किया जाए और

लिखित में कारणों को अभिलिखित किए जाने के पश्चात् उसको जारी या उसको जारी किए जाने की उपधारणा के अधीन/इस खंड के अधीन उसको जारी प्राधिकार को निलंबित या रद्द कर सकता है । इस खंड में प्रयोग किए गए शब्द 'वह जांच करने के पश्चात्' और 'लिखित में अभिलिखित कारणोंवश' हैं । उक्त खंड नियुक्ति प्राधिकारी को किसी शास्ति को अधिरोपित करने के पहले, जैसाकि इसमें परिकल्पित किया गया है, दो आज्ञापक शर्तों का पालन करने के लिए आनत करता है । प्रथम यह कि वह 'जांच' करेगा जैसाकि आवश्यक प्रतीत किया जाए और द्वितीय, वह 'लिखित में कारणों' अभिलिखित करेगा । ऑक्सपफोर्ड शब्दकोष शब्द रचना के अनुसार 'जांच' शब्द के अर्थ में परीक्षण, परीक्षा, पता लगाना, गहराई में जाना इत्यादि सम्मिलित हैं ।

10. इस न्यायालय ने **बी. मंजूला** बनाम **जिला कलक्टर, जिला आपूर्ति और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया :–

> "जांच डीलर को व्यक्तिगत रूप से अभिलेख जैसेकि डिक्री और स्टाक रजिस्टर पर आधारित उसके स्पष्टीकरण के लिए सुनवाई का अवसर प्रदान करती है । यदि आवश्यकता होती है, तो ऐसी 'जांच' में डीलर और उसकी तरफ से साक्षियों, यदि कोई हों, के शपथपूर्वक कथनों का अभिलिखित किया जाना सम्मिलित किया जाना चाहिए । ऐसे मामलों में जहां राशन कार्ड धारकों या अन्य व्यक्तियों द्वारा शिकायतें भेजी जाती हैं, तो उनका भी परीक्षण डीलर या उसके अधिवक्ता की उपस्थिति में किया जाना चाहिए और डीलर को ऐसे व्यक्तियों की प्रतिपरीक्षा का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए । अनुज्ञप्ति प्रदान करने वाले/अनुशासनिक प्राधिकारी डीलर को समस्त रिपोर्टें, जिनके आधार पर वह डीलर की अनुज्ञप्ति के विनिर्धारण का अवलंब लेने का आशय रखता है, उपलब्ध कराएगा । यदि डीलर के पास प्रस्तुत करने के लिए कोई स्पष्टीकरण उपलब्ध नहीं होता, तो अनुज्ञप्ति प्रदान करने

---

[1] 2015 (3) एल. डी. 617.

वाले/अनुशासनिक प्राधिकारी विस्तारपूर्वक जांच संचालित करने के लिए बाध्य नहीं होता ।

.... इस न्यायालय के अनुभव के आधार पर यह प्रकट होता है कि उचित मूल्य की दुकान के डीलरों के नियुक्ति प्राधिकारी डीलरों को तलब किए जाने के द्वारा व्यक्तिगत जांच की अपेक्षा करते हैं । वे मात्र अपने अधीनस्थ कर्मचारियों अर्थात् उप तहसीलदार और तहसीलदार द्वारा डीलर की अनुपस्थिति में तैयार की गईं रिपोर्टों का अवलंब लेते हैं और अपने निर्णय को मात्र उन्हीं रिपोर्टों के आधार पर पारित करते हैं । यह प्रक्रिया 'जांच' की संकल्पना का दुरुपयोग है, जिसका अन्यथा रूप से अर्थ डीलर को सुनवाई का निष्पक्ष अवसर उपलब्ध कराना होता है ।"

11. इस न्यायालय ने **कोंडामुडी बनर्जी** बनाम **राजस्व क्षेत्रीय अधिकारी, ओंगल**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया :-

"निर्विवाद रूप से अनुज्ञप्ति के माध्यम से आवश्यक वस्तुओं के वितरण के विशेषाधिकार को रद्द करने वाला आदेश अनुज्ञप्ति धारक के हितों पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाला होता है । सक्षम प्राधिकारियों के लिए अनुज्ञप्ति धारक को ऐसे किसी प्रतिकूल आदेश के अध्यधीन किए जाने के पूर्व यह बाध्यकारी है कि वे अनुज्ञप्तिधारी के विरुद्ध विरचित आरोपों के संबंध में अनुज्ञप्तिधारी द्वारा प्रस्तुत किए गए स्पष्टीकरण को ध्यान में रखते हुए अपने विवेक का प्रयोग करें । इस निष्पक्ष प्रक्रिया के अनुसरण में विफलता आरोपों को विरचित किए जाने के आत्यंतिक प्रयोजन को और स्पष्टीकरण की अपेक्षा किए जाने को निरर्थक बना देता है । यह कहना घीसापिटा है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत प्रशासनिक विधि के क्षेत्र में अंतःस्थापित हैं । जब कभी भी कोई कार्रवाई, जिसके कारण प्रतिकूल सिविल परिणाम कारित होने की संभाव्यता हो, का आश्रय लिए जाने की ईप्सा की जाती है तो वह व्यक्ति जो

---

[1] 2011 (2) ए. एल. डी 477.

ऐसी किसी कार्रवाई से प्रभावित हो सकता हो, अपनी प्रतिरक्षा के प्रयोजनार्थ युक्तिसंगत अवसर प्रदान किए जाने का हकदार है । किसी भी विनिश्चय में समाविष्ट कारण उस विनिश्चय के हृदय और आत्मा होते हैं और इसलिए उस आदेश में लिए गए विनिश्चय के लिए कारण समाविष्ट होने चाहिए ।"

12. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **मध्य प्रदेश इंडस्ट्रीज लिमिटेड** बनाम **भारत संघ**[1] और अन्य वाले मामले में अन्य बातों के साथ-साथ यह अभिनिर्धारित किया कि :-

"कारण दर्शित किए जाने की शर्त का उद्देश्य स्पष्टता को पुर:स्थापित करना होता है और यह शर्त में मनमानापन को अपवर्जित करती है या किसी स्थिति तक न्यूनतम करती है । यह शर्त उस पक्ष को संतोष प्रदान करने वाली होती है, जिसके विरुद्ध आदेश पारित किया जाता है और यह शर्त किसी अपीली या पर्यवेक्षणीय न्यायालय को भी किसी अधिकरणों को उनकी सीमा के भीतर रखने के भी समर्थ बनाती है ।"

13. **जी. वल्लीकुमारी** बनाम **आंध्रा एजुकेशन सोसाइटी और अन्य**[2] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने निर्णय के पैरा 19 में यह अभिनिर्धारित किया :-

"........ प्रत्येक अर्धन्यायिक या यहां तक कि प्रत्येक प्रशासनिक प्राधिकारी, जिसको कोई ऐसा आदेश पारित करने का कार्य दे दिया गया है, जो किसी व्यक्ति को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाला हो, द्वारा कारण अभिलिखित किए जाने और उस आदेश की संसूचना प्रभावित व्यक्ति को दिए जाने की अपेक्षा नैसर्गिक न्याय के नियमों के मान्यताप्राप्त पहलुओं में से एक है और जिसके अतिक्रमण का प्रभाव संबद्ध प्राधिकारी द्वारा पारित आदेश को दूषित करने का प्रभाव रखने वाला होता है ।

---

[1] ए. आई. आर. 1966 एस. सी. 671.

[2] (2010) 2 एस. सी. सी. 497.

इसका कारण यह है कि आदेश में स्पष्टता होनी चाहिए और स्पष्टता के अभाव में आदेश निष्प्रभावी हो जाता है । कारण व्यक्तिपरखता को वास्तविकता द्वारा प्रतिस्थापित कर देते हैं और यह नैसर्गिक न्याय का सिद्धांत है कि कारणों को अभिलिखित किया जाना चाहिए । इससे निर्णय लेने में पारदर्शिता और निष्पक्षता सुनिश्चित होती है ऐसे आदेश से जो व्यक्ति प्रतिकूल रूप से प्रभावित होता है, को यह ज्ञात हो जाता है कि उसके विरुद्ध कार्रवाई क्यों की गई ।"

14. इस न्यायालय ने **सी. दुर्गा श्री निवास राव** (उपरोक्त) वाले मामले में उचित मूल्य की दुकान के डीलर के प्राधिकार के रद्दकरण पर विचार करते हुए अभिनिर्धारित किया कि 2018 के नियंत्रण आदेश के खंड 24(vi) के अनुसार डीलर से स्पष्टीकरण प्राप्त होने के पश्चात्, यदि उसके द्वारा इनकार किया गया हो, नियुक्ति प्राधिकारी जांच संचालित करेगा और डीलर के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को साबित करने का अवसर प्रदान करेगा । ऐसी जांच डीलर के समक्ष संपूर्ण सामग्री प्रस्तुत किए जाने के द्वारा निष्पक्ष रूप से की जानी चाहिए, किंतु यह जांच नियमित विचारण न्यायालय के प्रक्रम तक नहीं की जानी चाहिए । आरोपों को साबित किए जाने का भार नियुक्ति प्राधिकारी पर होता है ।

15. इस न्यायालय ने **पिडीकिती सैलजा** (उपरोक्त) वाले मामले में, जो मामला भी डीलर की उचित मूल्य की दुकान के रद्दकरण का मामला है, यह अभिनिर्धारित किया :-

"इन प्रकथनों के प्रकाश में याची संख्या 4 को व्यक्तिगत सुनवाई का अवसर प्रदान किए जाने के द्वारा प्रत्यर्थी पर बिक्री और स्टॉक रजिस्टरों में प्रविष्टियों के संदर्भ में विस्तारपूर्वक जांच किए जाने की बाध्यता अधिरोपित की गई थी ।

प्रत्यर्थी संख्या 4 द्वारा पारित आदेश पढ़े जाने पर यह प्रतीत नहीं होता कि उसने कोई भी कार्रवाई की । चूंकि पुनरीक्षण याचिका प्रत्यर्थी संख्या 2 के समक्ष लंबित है, इसलिए यह न्यायालय प्रत्यर्थी संख्या 4 द्वारा पारित तारीख 16 सितंबर, 2014 के आदेश

की वैधता या अन्यथा रूप से निश्चायक जांच किए जाने से स्वयं को विरत करती है । तथापि, यह न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचती है कि याची के उचित मूल्य की दुकान के डीलर बने रहने के प्रयोजनार्थ प्रत्यर्थी संख्या 2 द्वारा फाइल की गई पुनरीक्षण याचिका के निस्तारण तक अंतरिम आदेश पारित किए जाने के लिए प्रयोजनार्थ उसके पक्ष में मजबूत मामला बनता है ।"

16. इस न्यायालय ने **एम. एच. प्रसाद** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य** (2020 की रिट याचिका संख्या 2942 में तारीख 23 अप्रैल, 2020 को पारित आदेश) वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया :-

"... क्योंकि इस मामले के याची को साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए कोई अवसर प्रदान नहीं किया गया था और स्पष्टीकरण प्राप्त होने के पश्चात् न तो किसी व्यक्तिगत सुनवाई अथवा काउंसेल के माध्यम में सुनवाई का अवसर प्रदान किया गया था और स्पष्टीकरण पर विचार न किए जाने के लिए किसी भी सुदृढ़ कारण का उल्लेख नहीं किया गया था, अत: आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है ।

तद्नुसार, रिट याचिका मंजूर की जाती है और द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा पारित तारीख 27 जनवरी, 2020 के निदेश संख्या के.3/2557/2019 में पारित आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता है और मामले को याची को साक्ष्य प्रस्तुत करने, यदि वह कोई साक्ष्य प्रस्तुत करना चाहता है, का अवसर प्रदान किए जाने और साथ ही याची को व्यक्तिगत रूप से या काउंसेल के माध्यम से सुनवाई का अवसर प्रदान किए जाने और यथाशीघ्र, इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तारीख से तीन माह के भीतर गुणागुण पर युक्तियुक्त आदेश पारित किए जाने के लिए वापस भेजा जाता है । जब तक यह कार्रवाई पूर्ण नहीं हो जाती, याची को जिला अनंथपुरामू के मंडल पेड्डावडूगुरु के ग्राम रुद्रमपेट में उचित मूल्य की दुकान संख्या 1225025 को संचालित करने की अनुज्ञा होगी ।"

17. यद्यपि याची के विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि आक्षेपित

आदेश रिपोर्ट 6-क के आधार पर पारित किया गया है, जैसाकि आक्षेपित आदेश से दर्शित होता है, फिर भी यह आक्षेपित आदेश रिपोर्ट 6-क पर आधारित नहीं है, बल्कि अन्य आरोपों के आधार पर भी पारित किया गया है । इसलिए, याची के विद्वान् काउंसेल की उक्त दलील अस्वीकृत किए जाने योग्य है ।

18. यद्यपि प्रत्यर्थियों की तरफ से उपस्थित विद्वान् सरकारी प्लीडर ने निवेदन किया कि याची को 2018 के आंध्र प्रदेश राज्य लक्ष्यित लोक वितरण प्रणाली (नियंत्रण) आदेश की धारा 24(ख) के अधीन जिला कलक्टर के समक्ष अपील का अनुकल्पिक अनुतोष उपलब्ध है, चूंकि स्पष्टीकरण प्राप्त होने के पश्चात् नियंत्रण आदेश के अधीन अनुध्यात कोई भी जांच संचालित नहीं की गई थी और चूंकि ऊपर निर्दिष्ट विनिश्चयों का अनुसरण किए जाने के द्वारा याची द्वारा प्रस्तुत किए गए स्पष्टीकरण को अस्वीकृत किए जाने के लिए किसी सुदृढ़ कारण का उल्लेख नहीं किया गया था, अतः रिट याचिका मंजूर की जाती है और द्वितीय प्रत्यर्थी द्वारा पारित तारीख 6 मार्च, 2020 का आक्षेपित आदेश अपास्त किया जाता और मामले को जांच संचालित करने के लिए द्वितीय प्रत्यर्थी को वापस भेजा जाता है, जैसीकि आवश्यक प्रतीत की जाए और याची को भी व्यक्तिगत रूप से या काउंसेल के माध्यम से सुनवाई का अवसर प्रदान किया जाए और गुणागुण पर युक्तियुक्त आदेश यथातिशीघ्र इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तारीख से तीन माह के भीतर पारित किया जाए । जब तक यह कार्रवाई पूर्ण नहीं हो जाती, याची को जिला अनंथपुरामू के मंडल पेड्डावडूगुरु के ग्राम रुद्रमपेट में उचित मूल्य की दुकान संख्या 1225025 संचालित करने की अनुज्ञा होगी । लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जाता । यदि इस रिट याचिका में कोई प्रकीर्ण याचिका लंबित है, तो उसे बंद समझा जाएगा ।

याचिका का निपटारा किया गया ।

शु.

विभोर वैभव इंफ्राहोम्स प्राइवेट लिमिटेड

बनाम

भारत संघ और अन्य

(2020 की रिट याचिका सिविल संख्या 13904)

तारीख 8 अक्तूबर, 2020

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी और न्यायमूर्ति डा. योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

भू-संपदा (विनियम और विकास) अधिनियम, 2016 (2016 का 16) – धारा 18, 2 (भ.क.), 2 (झ), और 71 – संप्रवर्तक द्वारा क्रेताओं को संपत्ति का कब्जा समयानुसार प्रदान न किया जाना – संपत्ति क्रेताओं द्वारा परियोजना में जमा रकम वापस प्राप्त न किया जाना, बल्कि उनके द्वारा फ्लैट का समयानुसार कब्जा हस्तगत किए जाने में विलंब के कारण प्राधिकरण के समक्ष प्रतिकर और ब्याज दिलाए जाने का अनुरोध किया जाना और प्राधिकरण द्वारा प्रतिकर और ब्याज का अनुतोष प्रदान किया जाना – प्राधिकरण को कब्जे में विलंब के आधार पर संपत्ति क्रेता को प्रतिकर और ब्याज दिलाने का अधिकार है ।

संक्षेप में वर्तमान मामले के तथ्य यह हैं कि याची 2016 के भू-संपदा (विनियामक और विकास) अधिनियम की धारा 2(भ.क.) के अर्थान्तर्गत भवन निर्माण परियोजना का संप्रवर्तक है । संप्रवर्तक ने याची-प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 के साथ तारीख 10 जुलाई, 2011 को संपत्ति विक्रय के संबंध में एक करार किया । निर्विवाद रूप से याची करार की शर्तों के अनुसार प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 को फ्लैट का कब्जा करार की तारीख से 30 माह की अवधि के भीतर हस्तगत करने की संविदात्मक बाध्यता के अंतर्गत था । करार में 180 दिनों की अतिरिक्त अवधि भी उपबंधित की गई थी । अतः, याची करार के अनुसार प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 को 36 माह, अर्थात् अधिकतम तीन वर्ष की अवधि के

भीतर फ्लैट का कब्जा सभी प्रकार के कार्य पूर्ण करके हस्तगत करने का दायी था । अतः, याची द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 को फ्लैट का कब्जा प्रदान किए जाने की अंतिम तारीख 9 जुलाई, 2014 थी । तथापि, याची प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 को सहमत समयावधि के भीतर समस्त कार्य पूर्ण करके फ्लैट का कब्जा प्रदान नहीं कर सका और इस प्रकार याची ने 2016 के अधिनियम की धारा 18 के उपबंधों का अतिक्रमण किया । अतः, प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 द्वारा फ्लैट का वास्तविक कब्जा तारीख 26 दिसंबर, 2017 को प्राप्त किया जा सका । चूंकि, याची ने 2016 के अधिनियम की धारा 18 के उपबंधों का अतिक्रमण किया था, इसलिए, प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 ने उत्तर प्रदेश भू-संपदा विनियामक प्राधिकरण के समक्ष तारीख 18 दिसंबर, 2018 को आवेदन फाइल किया, जैसाकि 2016 के अधिनियम की धारा 2(i)(झ) में परिभाषित है और प्रतिकर और उस पर ब्याज का दावा किया । चूंकि प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 ने प्रतिकर के लिए दावा किया था, इसलिए प्राधिकरण ने तारीख 22 मई, 2019 को यह अभिनिर्धारित करते हुए आदेश पारित किया कि इस संबंध में न्यायनिर्णायक प्राधिकारी की शरण ली जानी चाहिए । अतः, मामला 2016 के अधिनियम की धारा 71 के अधीन न्यायनिर्णायक प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित हुआ । न्यायनिर्णायक प्राधिकारी ने तारीख 30 सितंबर, 2019 को आक्षेपित आदेश पारित करते हुए प्रतिकर और ब्याज का संदाय किए जाने का आदेश पारित कर दिया । याची ने आक्षेपित आदेश से व्यथित होकर वर्तमान रिट याचिका संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – 2016 के अधिनियम की धारा 71 न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को धारा 12, 14, 18 और 19 के अधीन प्रतिकर का न्यायनिर्णयन करने की शक्ति प्रदान करती है । धारा 71 की उपधारा (3) यह उपबंधित करती है कि यदि न्यायनिर्णायक प्राधिकारी का इस बाबत समाधान हो जाता है कि कोई व्यक्ति उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट उपबंधों में से किसी उपबंध का अनुपालन करने में विफल रहा है, तो वह

प्रतिकर या ब्याज का संदाय किए जाने के लिए निर्देशित कर सकता है, जैसा भी मामला हो, जैसाकि वह उन धाराओं के किसी उपबंध के अनुसार उचित समझता हो । न्यायनिर्णायक प्राधिकारी ने आक्षेपित आदेश द्वारा प्रतिकर और ब्याज का अधिदेश पारित कर दिया, जैसाकि 2016 के अधिनियम की धारा 71 के अधीन धारा 18 के उपबंधों के भंग के लिए उपबंधित है । अतः, आक्षेपित आदेश बिना अधिकारिता के पारित नहीं किया गया है । परिणामस्वरूप, हम याची के विद्वान् काउंसेल के निवेदनों में कोई गुणागुण नहीं पाते और अभिनिर्धारित करते हैं कि न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अधिकारिता की कमी से ग्रसित नहीं है । 2016 के अधिनियम की धारा 38(1) 'प्राधिकरण' को अधिनियम, नियम और विनियम के अधीन संप्रवर्तकों, आबंटियों और भू-संपदा अभिकर्ताओं पर लागू बाध्यताओं के अतिलंघन के संबंध में शास्ति या ब्याज अधिरोपित करने की शक्ति प्रदान करती है । 2016 के अधिनियम की धारा 71(1)(3) के अधीन न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को 2016 के अधिनियम की धारा 12, 14, 18 और 19 के अधीन प्रतिकर का न्यायनिर्णयन किए जाने के लिए न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को ब्याज का अधिदेश पारित करने की शक्ति प्रदान की गई है । अतः, प्रतिकर का न्यायनिर्णयन करने की शक्ति न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को प्रदान की गई है न कि प्राधिकरण को । इसलिए, न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेश, जिसके द्वारा प्रतिकर का न्यायनिर्णयन किया गया, पूर्णतया 2016 के अधिनियम की धारा 71 के अंतर्गत है । हैबीटेक इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय, जिसका अवलंब याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा लिया गया, स्पष्टतया तथ्यों के आधार पर विभेदनीय है । हैबीटेक इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड वाले मामले के तथ्य यह थे कि जब संप्रवर्तक फ्लैट का कब्जा हस्तगत करने की अपनी बाध्यता को पूर्ण करने में विफल रहा, तब आबंटी ने ब्याज सहित संपूर्ण रकम वापस लौटाए जाने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया, चूंकि संप्रवर्तक द्वारा परियोजना को समय के भीतर पूर्ण नहीं किया गया था । अब इस

मामले में विवाद यह था कि मामला संप्रवर्तक के पास आबंटी द्वारा जमा की गई रकम को वापस दिलाए जाने और साथ ही ब्याज के अधिदेश तक सीमित था । इस न्यायालय ने 2016 के अधिनियम की धारा 38 के उपबंधों पर विचारोपरांत यह निष्कर्ष निकाला कि प्राधिकरण, जिसे अधिनियम की धारा 2(i) में परिभाषित किया गया है, को ब्याज का अधिदेश पारित करने की शक्ति प्राप्त है । वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 ने रकम वापस प्राप्त नहीं की, बल्कि उन्होंने शिकायत प्रस्तुत की और याची-संप्रवर्तक द्वारा उनको फ्लैट का कब्जा हस्तगत किए जाने में विलंब के कारण प्रतिकर और ब्याज दिलाए जाने का अनुरोध किया । अत: हैबीटेक इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय स्पष्टतया तथ्यों के आधार पर विभेदनीय है और याची के विद्वान् काउंसेल की दलीलों का समर्थन नहीं करता । (पैरा 11, 12 और 13)

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2020 की रिट याचिका सिविल संख्या 13904.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से	श्री स्वप्निल रस्तोगी
प्रत्यर्थियों की ओर से	सर्वश्री विनय कुमार पाठक, वसीम मसूद, अपर महासालिसीटर, मुख्य स्थायी काउंसेल

आदेश

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी और न्यायमूर्ति डा. योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव – याची के विद्वान् काउंसेल श्री स्वप्निल रस्तोगी की ओर से उपस्थित श्री सिद्धार्थ सिंघल प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से उपस्थित विद्वान् काउंसेल श्री विनय कुमार पाठक, प्रत्यर्थी संख्या 2 की तरफ से उपस्थित विद्वान् स्थायी काउंसेल और प्रत्यर्थी संख्या 3 और 4 के विद्वान् काउंसेल श्री वसीम मसूद की तरफ से उपस्थित श्री जगदीश प्रसाद को सुना ।

2. यह रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोष प्रदान किए जाने की प्रार्थना करते हुए फाइल की गई है :–

"(क) उत्तर प्रदेश भू-संपदा विनियामक प्राधिकरण, गौतमबुद्ध नगर के क्षेत्रीय कार्यालय के न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा शिकायत मामला संख्या (संलग्नक-1) ए.डी.जे./120185832 (**सारिका तुलश्यान और एक अन्य** बनाम **विभोर वैभव इंफ्राहोम्स प्राइवेट लिमिटेड**) में पारित तारीख 30 सितंबर, 2019 के आक्षेपित आदेश को अभिखंडित किए जाने और अभिलेख को तलब किए जाने के प्रयोजनार्थ उत्प्रेषण की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी किए जाएं ।

(ख) उत्तर प्रदेश भू-संपदा विनियामक प्राधिकरण, गौतमबुद्ध नगर के क्षेत्रीय कार्यालय के न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा 25 जून, 2020 को जारी किए गए आक्षेपित वसूली प्रमाणपत्र (संलग्नक-2) को अभिखंडित किए जाने और अभिलेख को तलब किए जाने के प्रयोजनार्थ उत्प्रेषण की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी किए जाएं ।

(ग) उत्तर प्रदेश भू-संपदा (विनियम और विकास) अधिनियम, 2016 की धारा 43(5) के परंतुक को 2016 के भू-संपदा (विनियम और विकास) अधिनियम की भावना के विपरीत और उसके टकराव में होने के कारण मनमानापूर्ण और संविधान के अधिकारातीत घोषित किए जाने के प्रयोजनार्थ समुचित रिट, आदेश या निर्देश जारी किए जाएं ।"

3. याची के विद्वान् काउंसेल ने अभिकथित किया कि याची अनुतोष 'ग' पर बल नहीं दे रहा है ।

तथ्य

4. संक्षेप में वर्तमान मामले के तथ्य यह है कि याची 2016 के भू-संपदा (विनियामक और विकास) अधिनियम (जिसको इसमें इसके पश्चात् '2016 का अधिनियम' कहकर निर्दिष्ट किया गया है) की धारा 2(भ-क) के अर्थान्तर्गत संप्रवर्तक है । याची ने प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6

के साथ तारीख 10 जुलाई, 2011 को निर्माणकर्ता-क्रेता करार में प्रविष्ट हुआ । निर्विवाद रूप से, करार के अनुसार याची प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 को फ्लैट का कब्जा करार की तारीख से 30 दिनों की अवधि के भीतर हस्तगत करने की संविदात्मक बाध्यता के अंतर्गत था । करार में 180 दिनों की अतिरिक्त अवधि भी उपबंधित की गई थी । अत:, याची करार के अनुसार प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 को 36 माह, अर्थात् तीन वर्ष की अवधि के भीतर फ्लैट का कब्जा सभी प्रकार के कार्य पूर्ण करके हस्तगत करने का दायी था । अत:, याची द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 को फ्लैट का कब्जा प्रदान किए जाने की अंतिम तारीख 9 जुलाई, 2014 थी । तथापि, याची प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 को सहमत समयावधि के भीतर समस्त कार्य पूर्ण करके फ्लैट का कब्जा प्रदान नहीं कर सका और इस प्रकार याची ने 2016 के अधिनियम की धारा 18 के उपबंधों का अतिक्रमण किया । प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 द्वारा फ्लैट का वास्तविक कब्जा तारीख 26 दिसंबर, 2017 को प्राप्त किया गया । चूंकि, याची ने 2016 के अधिनियम की धारा 18 के उपबंधों का अतिक्रमण किया था, इसलिए, प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 ने उत्तर प्रदेश भू-संपदा विनियामक प्राधिकरण के समक्ष तारीख 18 दिसंबर, 2018 को आवेदन फाइल किया, जैसाकि 2016 के अधिनियम की धारा 2(i) में परिभाषित है और प्रतिकर और उस पर ब्याज का दावा किया । चूंकि प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 ने प्रतिकर के लिए दावा किया था, इसलिए प्राधिकरण ने तारीख 22 मई, 2019 को यह अभिनिर्धारित करते हुए आदेश पारित किया कि इस संबंध में न्यायनिर्णायक प्राधिकारी की शरण ली जानी चाहिए । अत:, मामला 2016 के अधिनियम की धारा 71 के अधीन न्यायनिर्णायक प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित हुआ । न्यायनिर्णायक प्राधिकारी ने तारीख 30 सितंबर, 2019 को प्रतिकर और ब्याज का संदाय किए जाने का आदेश पारित करते हुए आक्षेपित आदेश पारित किया । याची ने पूर्वोक्त आक्षेपित आदेश से व्यथित होकर वर्तमान रिट याचिका संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन फाइल की ।

निवेदन

5. याची के विद्वान् काउंसेल ने निम्नलिखित निवेदन किए :-

"(i) न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को 2016 के अधिनियम की धारा 71 के अधीन ऐसी स्थिति में जहां आबंटी को संप्रवर्तक से कब्जा प्राप्त हो चुका है, प्रतिकर और उस पर ब्याज का अधिदेश पारित करने की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है ।

(ii) अतः, चूंकि आक्षेपित आदेश बिना किसी अधिकारिता के पारित किया है, इसलिए न तो 2016 के अधिनियम की धारा 43(5) के अधीन कोई अपील की जा सकती है और न ही अपील समुचित अनुतोष होगी ।"

6. याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा हमारे समक्ष अन्य कोई दलील नहीं दी गई ।

7. याची के विद्वान् काउंसेल ने अपने निवेदनों के समर्थन में इस न्यायालय द्वारा 2020 की रिट याचिका संख्या 910 (**हैबीटेक इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**) में तारीख 6 जुलाई, 2020 को पारित निर्णय का अवलंब लिया है ।

8. प्रत्यर्थी संख्या 2 के विद्वान् स्थायी काउंसेल और प्रत्यर्थी संख्या 3 और 4 के विद्वान् काउंसेल ने आक्षेपित आदेश का समर्थन किया और संयुक्त रूप से निवेदन किया कि न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को 2016 के अधिनियम की धारा 71 के अधीन प्रतिकर या ब्याज को न्यायनिर्णीत करने की पर्याप्त शक्ति प्राप्त है और इसलिए आक्षेपित आदेश बिना किसी अधिकारिता के पारित किया गया है ।

चर्चा और निष्कर्ष

9. इसके पहले कि हम पक्षों के निवेदनों पर विचार करें, यह समुचित होगा कि 2016 के अधिनियम के सुसंगत उपबंधों को प्रत्युत्पादित किया जाए, जो निम्नलिखित हैं :-

"**18. रकम का लौटाया जाना और प्रतिपूर्ति** – (1) यदि प्रवर्तक, –

(क) विक्रय करार के निबंधनों के अनुसार उसमें विनिर्दिष्ट तारीख तक सम्यक् रूप से पूरा करने में; या

(ख) इस अधिनियम के अधीन अथवा किसी अन्य कारण से रजिस्ट्रीकरण का निलंबन या प्रतिसंहरण के कारण विकासकर्ता के रूप में उसका कारबार बंद होने के कारण, यथास्थिति, किसी अपार्टमेंट, भू-खंड या भवन को पूरा करने में असफल रहता है या उसका कब्जा देने में असमर्थ रहता है तो वह उपलब्ध किसी अन्य उपचार पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना आबंटिती की मांग पर, यदि आबंटिती परियोजना से प्रत्याहृत होना चाहता है तो, यथास्थति, उस अपार्टमें, भू-खंड या भवन के संबंध में उसके द्वारा प्राप्त रकम को, ऐसी दर पर ब्याज सहित, जो इस निमित्त विहित की जाए, इस अधिनियम के अधीन यथा उपबंधित रीति में प्रतिकर लौटाने का दायी होगा :

परंतु जहां किसी आबंटिती का परियोजना से प्रत्याहरण का आशय नहीं है, वहां संप्रवर्तक द्वारा उसे कब्जा सौंपे जाने तक विलंब के प्रत्येक मास के लिए उस दर पर जो विहित की जाए ब्याज का संदाय किया जाएगा ।

(2) संप्रर्वतक ऐसी भूमि के, जिस पर इस अधिनियम के अधीन यथा उपबंधित रीति से परियोजना विकसित की जा रही है या विकसित की गई है, दोषपूर्ण हक के कारण हुई किसी हानि की दशा में आबंटितियों की प्रतिपूर्ति करेगा और इस उपधारा के अधीन प्रतिकर का दावा तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन उपबंधित परिसीमा से वर्जित नहीं होगा ।

(3) यदि संप्रवर्तक इस अधिनियम या उसके अधीन बनाए गए नियमों या विनियमों या विक्रय करार के अधीन उस पर अधिरोपित किन्हीं अन्य बाध्यताओं का निर्वहन करने में असफल रहता है तो वह आबंटितियों को प्रतिकार का इस अधिनियम के अधीन यथा उपबंधित रीति में संदाय करने के लिए दायी होगा ।

38. प्राधिकरण की शक्तियां – (1) प्राधिकरण को, संप्रवर्तकों, आबंटितियों और भू-संपदा अभिकर्ताओं पर डाली गई बाध्यताओं के

किसी उल्लंघन के संबंध में, इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों और विनियमों के अधीन शास्ति या ब्याज अधिरोपित करने की शक्ति होगी ।

(2) प्राधिकरण नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों द्वारा मार्गदर्शित होगा और इस अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों के अन्य उपबंधों के अधीन रहते हुए प्राधिकरण को अपनी स्वयं की प्रक्रिया विनियमित करने की शक्तियां होगी ।

(3) जहां ऐसे करार, कार्रवाई, लोप, पद्धति या प्रक्रिया के संबंध में कोई विवाद्यक उठाया जाता है, –

(क) जिसमें भू-संपदा परियोजन के विकास के संबंध में प्रतिस्पर्धा निवारण निर्बधन या विरूपण है, या

(ख) जिसमें एकाधिकारिक स्थिति की बाजार शक्ति का आंबटितियों के हितों को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने के लिए दुरूपयोग किए जाने का प्रभाव है,

वहां प्राधिकरण स्वप्रेरणा से ऐसे विवाद्यक के संबंध में भारत के प्रतिस्पर्धा आयोग की निर्देश कर सकेगा ।

43. भू-सम्पदा अपील अधिकरण की स्थापना – (1) समुचित सरकार, इस अधिनियम के प्रवृत्त होने की तारीख से एक वर्ष के भीतर, अधिसूचना द्वारा, (राज्य/संघ राज्यक्षेत्र का नाम) भू-सम्पदा अपील अधिकरण के नाम से ज्ञात एक अपील अधिकरण की स्थापना करेगी ।

(2) समुचित सरकार, यदि आवश्यक समझे, यथास्थिति, राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में की विभिन्न अधिकारिताओं के लिए अपील अधिकरण की ए या अधिक न्यायपीठ की स्थापना कर सकेगी ।

(3) अपील अधिकरण की प्रत्येक न्यायपीठ में कम से कम एक न्यायिक सदस्य और एक प्रशासनिक या तकनीकी सदस्य होगा ।

(4) दो या अधिक राज्यों या संघ राज्यक्षेत्रों की समुचित सरकार, जो वह ठीक समझे, एक एकल अपील अधिकरण स्थापित कर सकेगी ;

परंतु समुचित सरकार, आदेश द्वारा, इस धारा के अधीन अपील अधिकरण की स्थापना किए जाने तक तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन कृत्यशील अपील अधिकरण को इस अधिनियम के अधीन अपीलों की सुनवाई करने के लिए अपील अधिकरण पदाभिहित करेगी;

परंतु यह और कि इस धारा के अधीन अपील अधिकरण की स्थापना के पश्चात् इस धारा के चौथे परंतुक के अधीन उस रूप में अभिहित अपील अधिकरण के पास लंबित सभी मामले इस प्रकार स्थापित अपील अधिकरण को अंतरित हो जाएंगे और उनकी सुनवाई उस प्रक्रम पर की जाएगी जिस पर वह अपील अन्तरित हुई है ।

(5) प्राधिकरण या न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा इस अधिनियम के अधीन दिए गए किसी निदेश या किए गए किसी विनिश्चय या आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति उस अपील अधिकरण के समक्ष, जिसकी उस मामले के संबंध में अधिकारिता है, अपील फाइल कर सकेगा;

परंतु जहां कोई संप्रवर्तक, अपील अधिकरण में कोई अपील फाइल करता है वहां संप्रवर्तक द्वारा सर्वप्रथम अपील अधिकरण के पास, यथास्थिति, शास्ति का कम से कम तीस प्रतिशत या ऐसे उच्चतर प्रतिशत का, जो अपील अधिकरण द्वारा अवधारित किए जाए, अन्यथा आबंटिती को सदंत्त की जाने वाली कुल रकम, जिसके अन्तर्गत ब्याज और उस पर अधिरोपित प्रतिकर, यदि कोई हो, भी है, या दोनों उक्त अपील की सुनवाई के पूर्व, जमा किए बिना ग्रहण नहीं की जाएगी ।

स्पष्टीकरण – इस उपधारा के प्रयोजन के लिए व्यक्ति के अंतर्गत आंबटितियों का संगम या तत्समय प्रवृत्त किसी विधि के अधीन रजिस्ट्रीकृत कोई स्वैच्छिक संगम भी है ।

71. न्यायनिर्णयन करने की शक्ति – (1) प्राधिकरण, धारा 12, धारा 14 और धारा 18 और धारा 19 के अधीन प्रतिकर न्यायनिर्णीत करने के प्रयोजन के लिए समुचित सरकार के परामर्श से ऐसे एक या अधिक न्यायिक प्राधिकारी जैसा आवश्यक समझे जो जिला न्यायाधीश है या रहा है, न्यायनिर्णायक प्राधिकारी के रूप में नियुक्त करेगा, जो कि किसी संबद्ध व्यक्ति को, सुनवाई का युक्तियुक्त अवसर प्रदान किए जाने के पश्चात् विहित रीति में जांच करेगा;

परंतु ऐसा कोई व्यक्ति, जिसका धारा 12, धारा 14, धारा 18, और धारा 19 के अधीन आने वाले मामलों की बाबत परिवाद इस अधिनियम के प्रारंभ पर या उसके पूर्व, उपभोक्ता संरक्षण अधिनियम, 1986 (1986 का 68) की धारा 9 के अधीन स्थापित उपभोक्ता विवाद प्रतितोष मंच या उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग या राष्ट्रीय उपभोक्ता विवाद प्रतितोष आयोग के समक्ष लंबित है, यथास्थिति, उस पीठ या आयोग की अनुज्ञा से उसके समक्ष लंबित परिवाद को वापस ले सकेगा और इस अधिनियम के अधीन न्यायनिर्णायक प्राधिकारी के समक्ष आवेदन फाइल कर सकेगा ।

(2) उपधारा (1) के अधीन प्रतिकर का न्यायनिर्णयन किए जाने संबंधी आवेदन पर न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा यथासंभव शीघ्रता के साथ कार्यवाही की जाएगी और उसके आवेदन की प्राप्ति की तारीख से साठ दिन की अवधि के भीतर निपटारा किया जाएगा;

परंतु जहां ऐसे किसी आवेदन का निपटारा उक्त साठ दिन की अवधि के भीतर नहीं किया जा सकता है, वहां न्यायनिर्णायक प्राधिकारी उक्त अवधि के भीतर आवेदन का निपटारा न किए जाने के अपने कारण लेखबद्ध करेगा ।

(3) न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को जांच करते समय मामले के तथ्यों और परिस्थितियों से अवगत किसी व्यक्ति को साक्ष्य देने के

लिए अथवा ऐसे किसी दस्तावेज को, जो न्यायनिर्णायक प्राधिकारी की राय में जांच की विषय-वस्तु के लिए उपयोगी या सुसंगत हो सकता है, प्रस्तुत करने के लिए समन करने तथा हाजिर कराने की शक्ति होगी और जांच पर, यदि उसका यह समाधान हो जाता है कि वह व्यक्ति उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट धाराओं में से किसी भी धारा के उपबंधो का अनुपालन करने में असफल रहा है तो वह उन धाराओं में से किसी भी धारा के उपबंधों के अनुसार, यथास्थिति, ऐसे प्रतिकर या ब्याज का संदाय करने का निदेश दे सकेगा, जो वह ठीक समझे ।"

10. याची के विद्वान् काउंसेल ने इस तथ्य को विवादित नहीं किया है कि तारीख 10 जुलाई, 2011 के करार के अनुसार याची-संपवर्तक प्रत्यर्थी 5 और 6 को समस्त कार्य पूर्ण करने के पश्चात् फ्लैट का भौतिक कब्जा करार की तारीख से 30 माह के भीतर हस्तगत करने का दायी था । करार में 180 दिनों की अतिरिक्त अवधि भी उपबंधित की गई थी । अतः, प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 को फ्लैट का कब्जा तारीख 9 जुलाई, 2014 तक हस्तगत कर दिया जाना चाहिए था, जबकि प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 द्वारा याची से फ्लैट का कब्जा तारीख 26 दिसंबर, 2017 को प्राप्त किया गया । अतः, करार के अतिलंघन के संबंध में कोई विवाद नहीं है । याची के विद्वान् काउंसेल ने भी कब्जा हस्तगत किए जाने के बाबत कारित विलंब के संबंध में याची के दायित्व पर कोई विवाद नहीं किया है । अतः, अधिनियम की धारा 18 के उपबंध, जहां तक निर्विवाद तथ्यों का संबंध है, वर्तमान मामले के तथ्यों पर आकर्षित होते हैं ।

11. 2016 के अधिनियम की धारा 71 न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को धारा 12, 14, 18 और 19 के अधीन प्रतिकर का न्यायनिर्णयन करने की शक्ति प्रदान करती है । धारा 71 की उपधारा (3) यह उपबंधित करती है कि यदि न्यायनिर्णायक प्राधिकारी का इस बाबत समाधान हो जाता है कि कोई व्यक्ति उपधारा (1) में विनिर्दिष्ट उपबंधों में से किसी उपबंध का अनुपालन करने में विफल रहा है, तो वह प्रतिकर या ब्याज का संदाय किए जाने के लिए निर्देशित कर सकता है, जैसा भी मामला हो, जैसाकि वह उन धाराओं के किसी उपबंध के अनुसार उचित समझता हो ।

न्यायनिर्णायक प्राधिकारी ने आक्षेपित आदेश द्वारा प्रतिकर और ब्याज का अधिदेश पारित कर दिया, जैसाकि 2016 के अधिनियम की धारा 71 के अधीन धारा 18 के उपबंधों के भंग के लिए उपबंधित है । अतः, आक्षेपित आदेश बिना अधिकारिता के पारित नहीं किया गया है । परिणामस्वरूप, हम याची के विद्वान् काउंसेल के निवेदनों में कोई गुणागुण नहीं पाते और अभिनिर्धारित करते हैं कि न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेश अधिकारिता की कमी से ग्रसित नहीं है ।

12. 2016 के अधिनियम की धारा 38(1) 'प्राधिकरण' को अधिनियम, नियम और विनियम के अधीन संप्रवर्तकों, आबंटियों और भू-संपदा अभिकर्ताओं पर लागू बाध्यताओं के अतिलंघन के संबंध में शास्ति या ब्याज अधिरोपित करने की शक्ति प्रदान करती है । 2016 के अधिनियम की धारा 71(1)(3) के अधीन न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को 2016 के अधिनियम की धारा 12, 14, 18 और 19 के अधीन प्रतिकर का न्यायनिर्णयन किए जाने के लिए न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को ब्याज का अधिदेश पारित करने की शक्ति प्रदान की गई है । अतः, प्रतिकर का न्यायनिर्णयन करने की शक्ति न्यायनिर्णायक प्राधिकारी को प्रदान की गई है न कि प्राधिकरण को । इसलिए, न्यायनिर्णायक प्राधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेश, जिसके द्वारा प्रतिकर का न्यायनिर्णयन किया गया, पूर्णतया 2016 के अधिनियम की धारा 71 के अंतर्गत है ।

13. **हैबीटेक इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय, जिसका अवलंब याची के विद्वान् काउंसेल द्वारा लिया गया, स्पष्टतया तथ्यों के अधार पर विभेदनीय है । **हैबीटेक इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले के तथ्य यह थे कि जब संप्रवर्तक फ्लैट का कब्जा हस्तगत करने की अपनी बाध्यता को पूर्ण करने में विफल रहा, तब आबंटी ने ब्याज सहित संपूर्ण रकम वापस लौटाए जाने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया, चूंकि संप्रवर्तक द्वारा परियोजना को समय के भीतर पूर्ण नहीं किया गया था । अब इस मामले में विवाद यह था कि मामला संप्रवर्तक के पास आबंटी द्वारा जमा की गई रकम को वापस दिलाए जाने और साथ ही ब्याज के

अधिदेश तक सीमित था । इस न्यायालय ने 2016 के अधिनियम की धारा 38 के उपबंधों पर विचारोपरांत यह निष्कर्ष निकाला कि प्राधिकरण, जिसे अधिनियम की धारा 2(i) में परिभाषित किया गया है, को ब्याज का अधिदेश पारित करने की शक्ति प्राप्त है । वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी संख्या 5 और 6 ने रकम वापस प्राप्त नहीं की, बल्कि उन्होंने शिकायत प्रस्तुत की और याची-संप्रवर्तक द्वारा उनको फ्लैट का कब्जा हस्तगत किए जाने में विलंब के कारण प्रतिकर और ब्याज दिलाए जाने का अनुरोध किया । अत: **हैबीटेक इंफ्रास्ट्रक्चर लिमिटेड** (उपरोक्त) वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा दिया गया निर्णय स्पष्टतया तथ्यों के आधार पर विभेदनीय है और याची के विद्वान् काउंसेल की दलीलों का समर्थन नहीं करता ।

14. इस प्रक्रम पर याची के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि याची को 2016 के अधिनियम की धारा 43(5) के अधीन अपील के अनुतोष का अनुसरण करने दिया जाना चाहिए ।

15. याची को सदैव यह अधिकार है कि वह अधिनियम की धारा 43(5) के अधीन अपील के अनुतोष को प्राप्त कर सके, जिसके लिए किसी आदेश का पारित किया जाना अपेक्षित नहीं है ।

16. पूर्वोक्त कारणवश, हम इस रिट याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाते । परिणामस्वरूप, रिट याची को इस बाबत स्वतंत्रता प्रदान करते हुए खारिज की जाती है कि वह 2016 के अधिनियम की धारा 43(5) के अधीन अपील के अनुतोष का आश्रय ले । यदि याची विधि अनुसार अपील प्राधिकारी के समक्ष कोई अपील फाइल करता है, तो अपील प्राधिकारी इस न्यायालय द्वारा मामले के गुणागुण पर की गई किसी भी मताभिव्यक्ति से प्रभावित हुए बिना उस अपील को निर्णीत करेगा ।

रिट याचिका खारिज की गई ।

शु.

महेश चंद्र भारद्वाज

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

(2020 की रिट याचिका संख्या 15941)

तारीख 12 अक्तूबर, 2020

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केशरवानी और न्यायमूर्ति डा. योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

संविधान, 1950 – अनुच्छेद 243थ (भाग 9-क) – नगरपालिकाएं – निर्वाचित पदधारक निर्वाचक मंडल को जवाबदेह होता है और उसको उसके निर्वाचित पद से हटाए जाने के दुष्परिणाम गंभीर और प्रतिकूल प्रकृति के होते हैं – निर्वाचित पदधारक का अधिकार नि:संदेह रूप से कानूनी अधिनियमिति के निबंधनों के अंतर्गत होता है और उसे पद से हटाए जाने की कार्रवाई भी की जा सकती है, किंतु केवल विधानमंडल द्वारा अधिकथित उपबंधों के कड़ाईपूर्वक पालन के पश्चात् ।

उत्तर प्रदेश नगरपालिका अधिनियम, 1916 (1916 का उत्तर प्रदेश अधिनियम संख्या 2) – धारा 48 – निर्वाचित अध्यक्ष के मामले में पद से हटाए जाने की प्रक्रिया 1916 के अधिनियम की धारा 48 के अधीन विहित है और परिणामस्वरूप जब कभी भी अध्यक्ष को उसके निर्वाचित पद से हटाए जाने के संबंध में कोई विवाद्यक उद्भूत होता है, तो कानूनी उपबंध के अधीन विहित प्रक्रिया का कड़ाईपूर्वक पालन किया जाना अपेक्षित होता है ।

याची द्वारा वर्तमान रिट याचिका यह प्रकथन करते हुए फाइल की गई कि वह रामपुर की नगर पंचायत मसवासी का निर्वाचित सदस्य है और वह प्रत्यर्थी संख्या 2 को नगर पंचायत अध्यक्ष पद से हटाए जाने की कार्रवाई आरंभ किए जाने के लिए निर्देशित किए जाने और उसके विरुद्ध वसूली कार्रवाई आरंभ किए जाने की ईप्सा कर रहा है । याची

द्वारा यह दलील दी गई कि प्रत्यर्थी संख्या 2 के विरुद्ध याची द्वारा कुछ संविदाएं प्रदान किए जाने और साथ ही कुछ अन्य अभिकथित वित्तीय अनियमितताओं के संबंध में कतिपय शिकायतें की गई थीं, जिनके संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 4 द्वारा रिपोर्ट भी प्रस्तुत की जा चुकी है । राज्य प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान् स्थायी काउंसेल ने सूचित किया कि किसी निर्वाचित अध्यक्ष को उसके पद से हटाए जाने के प्रयोजनार्थ 1916 के उत्तर प्रदेश नगर पालिका अधिनियम की धारा 48 के अधीन उपबंधों के निबंधनों के अनुसार संपूर्ण प्रक्रिया विहित है और उक्त प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए याची, जो नगर पंचायत का निर्वाचित सदस्य है, द्वारा फाइल की गई रिट याचिका, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 2 को नगर पंचायत अध्यक्ष पद से हटाए जाने और उसके विरुद्ध वसूली कार्रवाई आरंभ किए जाने की ईप्सा की गई है, पोषणीय होगी । न्यायालय द्वारा रिट याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – हमारी सुविचारित राय में संविधान के भाग IX-क के अधीन निर्वाचित पदधारक निर्वाचक मंडल को जवाबदेह होता है और उसको उसके निर्वाचित पद से हटाए जाने के दुष्परिणाम होते हैं, जो गंभीर और प्रतिकूल प्रकृति के होते हैं । निर्वाचित पदधारक का अधिकार नि:संदेह रूप से कानूनी अधिनियमिति के निबंधनों के अंतर्गत होता है और उसे पद से हटाए जाने की कार्रवाई भी आरंभ की जा सकती है, किंतु केवल इस विधानमंडल द्वारा अधिकथित उपबंधों के कड़ाईपूर्वक पालन के पश्चात् । 1916 के अधिनियम के अंतर्गत किसी निर्वाचित अध्यक्ष के मामले में उसको पद से हटाए जाने की प्रक्रिया 1916 के अधिनियम की धारा 48 के अधीन विहित की गई है और परिणामस्वरूप जब कभी भी अध्यक्ष को उसके निर्वाचित पद से हटाए जाने के संबंध में कोई विवाद्यक उद्भूत होता है, तो कानूनी उपबंध के अधीन विहित प्रक्रिया का कड़ाईपूर्वक पालन किया जाना अपेक्षित होता है । याची के विद्वान् काउंसेल पूर्वोक्त विधिक स्थिति को विवादित करने के समर्थ नहीं हो सके हैं कि नगर पंचायत के निर्वाचित अध्यक्ष को उसके पद से हटाए जाने के लिए प्रक्रिया 1916 के अधिनियम की धारा 48 के उपबंधों

के अनुसार होनी चाहिए । हम पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए वर्तमान रिट याचिका पर याचित अनुतोषों को प्रदान किए जाने के बाबत विचार करने के लिए आनत नहीं हैं और रिट याचिका तद्नुसार खारिज की जाती है । (पैरा 15, 16, 17 और 18)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2016]	2016 (1) ए. डी. जे. (1) (एफ. बी.) : **पारस जैन** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	9
[2012]	(2012) 4 एस. सी. सी. 407 : **रवि यशवंत भोयर** बनाम **जिला कलक्टर, रायगढ़ और अन्य** ;	10
[2010]	(2010) 2 एस. सी. सी. 319 : **शारदा कैलाश मित्तल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य** ;	13
[2010]	(2010) 7 एस. सी. सी. 129 : **बोन्डुरामास्वामी और अन्य** बनाम **बैंगलोर विकास प्राधिकरण** ;	7
[2002]	(2002) 5 एस. सी. सी. 685 : **भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (ई.)** बनाम **इंस्टीट्यूट आफ सोशसल वेलफेयर और अन्य** ;	11
[2001]	(2001) 6 एस. सी. सी. 260 : **तरलोचन देव शर्मा** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य** ;	12
[1964]	ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 364 : **भारत संघ** बनाम **एच. सी. गोयल** ;	11
[1963]	ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 395 : **बच्चित्तर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य और एक अन्य** ।	11

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2020 की रिट याचिका संख्या 15941.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री आशीष मल्होत्रा

प्रत्यर्थियों की ओर से मुख्य स्थायी काउंसेल

निर्णय

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केशरवानी और न्यायमूर्ति डा. योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव – याची के विद्वान् काउंसेल श्री आशीष मल्होत्रा और राज्य प्रत्यर्थियों के विद्वान् स्थायी काउंसेल को सुना ।

2. वर्तमान रिट याचिका याची द्वारा यह प्रकथन करते हुए फाइल की गई है कि वह रामपुर की नगर पंचायत मसवासी का निर्वाचित सदस्य है और वह प्रत्यर्थी संख्या 2 को नगर पंचायत के अध्यक्ष के पद से हटाए जाने के लिए कार्रवाई आरंभ किए जाने के लिए निर्देशित किए जाने और उक्त प्रत्यर्थी के विरुद्ध वसूली कार्रवाई आरंभ किए जाने की ईप्सा कर रहा है ।

3. याची द्वारा यह दलील दी गई है कि प्रत्यर्थी संख्या 2 के विरुद्ध याची द्वारा कुछ संविदाएं प्रदान किए जाने और साथ ही कुछ अन्य अभिकथित वित्तीय अनियमितताओं के संबंध में कतिपय शिकायतें की गई थीं, जिनके संबंध में प्रत्यर्थी संख्या 4 द्वारा रिपोर्ट भी प्रस्तुत की जा चुकी है ।

4. राज्य प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान् स्थायी काउंसेल ने सूचित किया कि किसी निर्वाचित अध्यक्ष को उसके पद से हटाए जाने के प्रयोजनार्थ 1961 के उत्तर प्रदेश नगरपालिका अधिनियम की धारा 48 के अधीन उपबंधों के निबंधनों के अनुसार संपूर्ण क्रिया विहित की गई है और उक्त प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए याची द्वारा फाइल की गई रिट याचिका, जो नगर पंचायत का निर्वाचित सदस्य है, द्वारा फाइल की गई रिट याचिका, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 2 को नगर

पंचायत अध्यक्ष पद से हटाए जाने और उसके विरुद्ध वसूली कार्रवाई आरंभ किए जाने की ईप्सा की गई है, पोषणीय होगी ।

5. परस्पर विरोधी दलीलों के अधिमूल्यन के प्रयोजनार्थ विधि के अधीन सुसंगत उपबंधों का उल्लेख किया जाना चाहिए ।

6. नगरपालिकाओं से संबंधित संविधान का भाग IX-क आधारी स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं को स्थापित किए जाने को दृष्टि में रखते हुए नगरपालिकाएं स्थापित किए जाने के लिए 1992 के संविधान (74वां संशोधन) अधिनियम द्वारा अंत:स्थापित किया गया था । संविधान में भाग IX-क को प्रस्तावित किए जाने का उद्देश्य यह था कि अनेक राज्यों में स्थानीय निकाय उचित रीति में कार्य नहीं कर रहे थे और समयानुसार निर्वाचन आयोजित नहीं किए जा रहे थे और नामित लोगों के निकाय लंबी अवधि से कार्यरत थे । चुनाव अनियमित थे और अनेक अवसरों पर अनावश्यक रूप से या तो विलंबित थे या स्थगित कर दिए गए थे और निर्वाचित निकायों को बिना किसी पर्याप्त न्यायौचित्य के या तो निलंबित कर दिया गया था या उनके स्थान पर अन्य निकाय स्थापित कर दिए गए थे । संविधान में राजनैतिक शासन में स्थानीय निकायों को उनके अधिकारपूर्ण स्थान दिलाए जाने के प्रयोजनार्थ नए उपबंध संयोजित किए गए । इस बात को आवश्यक समझा गया था कि नियमित और निष्पक्ष निर्वाचन के संचालन को सुनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ इन निकायों को संवैधानिक हैसियत प्रदान की जाए ।

7. संविधान के पूर्वोक्त भाग IX-क के उद्देश्य और प्रयोजन को **बोन्डुरामास्वामी और अन्य** बनाम **बैंगलोर विकास प्राधिकरण**[1] वाले मामले में स्पष्ट किया गया और यह अभिनिर्धारित किया गया :-

> "44. नगरपालिकाओं के संयोजन, वार्ड समितियों के गठन और संयोजन, कमजोर वर्गों के लिए सीटों का आरक्षण, नगर-पालिकाओं की अवधि, शक्तियां, प्राधिकार, नगरपालिकाओं के उत्तरदायित्व, कर अधिरोपित करने की शक्तियां, उचित निरीक्षण

---

[1] (2010) 7 एस. सी. सी. 129.

और नगरपालिकाओं के निर्वाचनों का केंद्रीयकृत नियंत्रण, जिला नियोजन के लिए समितियों का गठन और महानगरीय योजना से संबंधित उपबंध या तो विद्यमान नहीं थे या अपर्याप्त पाए गए या नगरपालिकाओं से संबंधित राज्य विधियों में दोषपूर्ण स्थिति में थे ।

45. भाग IX-क नगरपालिकाओं को संवैधानिक हैसियत प्रदान किए जाने और न्यूनतम समान नियम अधिकथित किए जाने और निर्वाचन के नियमित और निष्पक्ष रूप से संचालित किए जाने के द्वारा नगरीय क्षेत्रों में आधारी स्तर पर लोकतांत्रिक राजनैतिक शासन को मजबूती प्रदान किए जाने के लिए ईप्सित है । जब भाग IX-क प्रवृत्त हुआ तो नगरपालिकाओं से संबंधित विद्यमान विधियों के उपबंध, जो भाग IX-क के उपबंधों के असंगत या विपरीत थे, समाप्त हो गए और वर्तमान में लागू नहीं हैं । कुछ समयावधि के लिए निरंतरता उपबंधित किए जाने और इस दौरान संबंधित राज्य सरकारों को भाग IX-क के उपबंधों के सामंजस्य में नगरपालिकाओं से संबंधित अलग-अलग अधिनियमितियों को लाए जाने के लिए अनुच्छेद 243-जे.एफ. अंत:स्थापित किया गया था । इसका उद्देश्य नगर सुधार न्यासों या विकास प्राधिकरणों, जो योजनाएं सृजित किए जाने और जनता को भूखंड/मकान/फ्लैट उपलब्ध कराए जाने के द्वारा नगरों के योजनाबद्ध विकास के विनिर्दिष्ट और विशेषज्ञता प्राप्त क्षेत्र में कार्य करते हैं, से संबंधित किसी विधि का अविधिमान्यकरण किया जाना नहीं था ।"

8. 1992 के 74वें संशोधन अधिनियम को नगरीय क्षेत्रों में नगर-पालिका निकायों की प्रणाली को मजबूती प्रदान किए जाने के लिए प्रवृत्त गया था और इसका उद्देश्य नगरीय क्षेत्रों में स्थानीय स्वशासन को मजबूती प्रदान करना था । 73वें और 74वें संशोधनों के अनुसार पंचायतों और नगरपालिकाओं को स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं के रूप में संवैधानिक हैसियत प्रदान की गई और उनकी भूमिका और स्थिति और साथ ही उनकी शक्तियों, कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों को संविधान द्वारा परिभाषित किया गया । स्वायत्तता प्राप्त शासन की ये संस्थाएं

अब मात्र राज्य के प्रशासनिक अभिकरण नहीं हैं, बल्कि उनको यह सुनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ स्वायत्ता प्रदान की गई है कि लोकतंत्र को आधारी स्तर पर अभिव्यक्ति प्राप्त हो सके । 73वें और 74वें संशोधन, दोनों ही इन संस्थाओं द्वारा आधारी स्तर पर लोकतांत्रिक शासन के लिए उपबंधित किए जाने को दृष्टि में रखते हुए स्वायत्त शासन में लोगों की वृहत्तर भागीदारी और शक्ति के विकेंद्रीयकरण के लिए उपाय उपबंधित करते हैं ।

9. नियंत्रण का तरीका और परिधि, जिसका प्रयोग स्थानीय स्वशासन की इन संस्थाओं के ऊपर राज्य के अभिकरण करते हैं और वह तरीका जिसमें सुसंगत कानूनी उपबंधों का निर्वचन किए जाने की आवश्यकता है और जो संवैधानिक उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायक हैं, को इस न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ द्वारा **पारस जैन** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में स्पष्ट किया गया और यह अभिनिर्धारित किया गया :-

> "15. नियंत्रण की सीमा, जिसका प्रयोग राज्य के अभिकरण स्थानीय स्वशासन की इन संस्थाओं के ऊपर करते हैं, आवश्यक रूप से संवैधानिक स्तरमानों के पुष्टिकरण में होनी चाहिए । विनियामक प्रकृति के राज्य विधानों का निर्वचन ऐसे तरीके में किया जाना चाहिए, जो संवैधानिक उद्देश्यों की प्राप्ति को सुकर बनाने वाला हो । न्यायालय को उस स्वायत्ता को अभिव्यक्ति प्रदान करनी चाहिए, जो संविधान के भाग IX और IX-क पर आधारित उच्च संवैधानिक प्रयोजनों के साथ संगत हो और जिनको स्थानीय स्वशासन के संवैधानिक रूप से मान्यता प्राप्त प्रक्रमों द्वारा धारण किया जाना अपेक्षित हो । अतः, राज्य विधान का निर्वचन करते हुए इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि संवैधानिक प्राचलों की पुष्टि किए जाने की आवश्यकता होती है । ऐसा राज्य विधान, जो स्थानीय स्वशासन की संस्थाओं की स्वायत्ता को कमजोर कर दे, से यथासंभव बचा जाना चाहिए ।

[1] 2016 (1) ए. डी. जे. (1) (एफ. बी.).

इसी प्रकार से ऐसा कोई निर्वचन, जिसके परिणामस्वरूप पंचायतों और नगरपालिकाओं की भूमिका को प्रशासनिक अधीनता की भूमिका तक घटाया जा सके, से परहेज किया जाना चाहिए । परिणामस्वरूप, जहां कोई विवाद्यक किसी व्यक्ति को किसी नगरपालिका के निर्वाचित शीर्ष पद से हटाए जाने के संबंध में उद्भूत होता हो, जैसाकि वर्तमान मामले में हुआ है, विधि द्वारा विहित प्रक्रिया का अनुसरण किया जाना चाहिए । विधि का निर्वचन ऐसी रीति में किया जाना चाहिए, जो उसको उसके क्रियान्वयन और प्रभाव की दृष्टि से उचित, निष्पक्ष और युक्तिसंगत ठहरा सके । इसके अतिरिक्त ऐसे क्षेत्रों में, जहां विधि शांत है, न्यायालयों को निर्वचन की प्रक्रिया के दौरान यह सुनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रयास करना चाहिए कि पद से हटाए जाने की प्रक्रिया अनुच्छेद 14 की आज्ञा के साथ संगत होते हुए न्यायसंगत, निष्पक्ष और तर्कसंगत हो ।"

10. 1992 के 74वें संशोधन अधिनियम द्वारा प्रदत्त संवैधानिक हैसियत के संदर्भ में अवचार के आधार पर निर्वाचित पदाधिकारी को उसके पद से हटाया जाना **रवि यशवंत भोयर** बनाम **जिला कलक्टर, रायगढ़ और अन्य**[1] वाले मामले में विचारण की विषयवस्तु था, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया कि किसी निर्वाचित पदाधिकारी को राज्य द्वारा अनौपचारिक तरीका अंगीकृत करते हुए विहित प्रक्रिया का पालन किए बिना अशिष्टतापूर्वक हटाए जाने की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती । इस संबंध में निर्णय में की गई मताभिव्यक्ति को नीचे उद्धृत किया गया है :-

"21. नगरपालिकाओं को संविधान के 1992 के 74वें संशोधन द्वारा तारीख 1 जून, 1993 से संशोधित करके संवैधानिक हैसियत प्रदान की गई । नगरपालिकाओं को संविधान के अनुच्छेद 243-ख के अधीन विभिन्न शक्तियां प्रदान की गई हैं ।

---

[1] (2012) 4 एस. सी. सी. 407.

22. संविधान में भाग IX और भाग IX-क को संयोजित किए जाने के द्वारा किया गया संशोधन स्थानीय स्वशासन को आधारी लोकतांत्रिक इकाई के रूप में, जो शासकीय नियंत्रण से मुक्त हो, पूर्ण स्वायत्ता प्रदान करता है । अतः, ऐसी शक्ति का प्रयोग, जो किसी संवैधानिक संस्था को नष्ट करने का प्रभाव रखने वाली हो, न केवल अत्याचारपूर्ण है बल्कि इस देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था के लिए खतरनाक भी है । इसलिए, किसी निर्वाचित पदाधिकारी को उसके पद से संविधान के अनुच्छेद 21 के उपबंधों का अतिक्रमण करते हुए विधि द्वारा विहित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना और राज्य द्वारा अंतरस्थ हेतुओं को अभिप्राप्त किए जाने के लिए धोखेबाजी का आश्रय लेते हुए और अनौपचारिक दृष्टिकोण अपनाते हुए अशिष्टतापूर्वक हटाए जाने की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जा सकती । न्यायालय विधि के संरक्षक होने के नाते किसी संस्था को समाप्त किए जाने के किसी प्रयास को सहन नहीं कर सकते ।

23. देश की लोकतांत्रिक व्यवस्था को सदैव ही संविधान के आधारी लक्षण के रूप में मान्यता प्रदान की गई है, जैसेकि अन्य लक्ष्णों को प्रदान की गई है अर्थात् संविधान की सर्वोच्चता, विधि का शासन, शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत, संविधान के अनुच्छेद 32, 26 और 27 के अधीन न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति इत्यादि । (देखें : केशवानंद भारतीय **बनाम** केरल राज्य, ए. आई. आर. 1973, एस. सी. 1461, मिनरवा मिल्स लिमिटेड **बनाम** भारत संघ, ए. आई. आर. 1980 एस. सी. 1789, भारत संघ **बनाम** एसोसिएशन फार डेमोक्रेटिक रिफार्म्स, ए. आई. आर. 2002 एस. सी. 2112, 2002 का विशेष निर्देश संख्या 1 गुजरात विधानसभा निर्वाचन मामला, ए. आई. आर. 2003 एस. सी. 87 और कुलदीप नैय्यर **बनाम** भारत संघ, ए. आई. आर. 2006 एस. सी. 3127) वाले मामले ।"

11. **बच्चित्तर सिंह** बनाम **पंजाब राज्य और एक अन्य**[1] और **भारत**

---

[1] ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 395.

भारत संघ बनाम **एच. सी. गोयल**[1] और साथ ही **भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (ई.)** बनाम **इंस्टीट्यूट आफ सोशल वेलफेयर और अन्य**[2] वाले मामलों में संविधान न्यायपीठों द्वारा दिए गए निर्णयों को निर्दिष्ट करते हुए स्थिरीकृत विधिक स्थिति कि किसी साबित अवचार के आधार पर किसी सम्यक् रूप से निर्वाचित सदस्य को हटाया जाना अर्धन्यायिक कार्रवाई है, को दोहराया गया है ।

12. **तरलोचन देव शर्मा** बनाम **पंजाब राज्य और अन्य**[3] वाले मामले में 1911 के पंजाब नगरपालिका अधिनियम के अधीन नगरपालिका परिषद् के अध्यक्ष को उसके पद से हटाए जाने से संबंधित मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया कि किसी को निर्वाचित पद से हटाया जाना गंभीर मामला है और इसके पहले कि किसी कार्रवाई को न्यायानुमत ठहराया जाए, पद से हटाए जाने का स्पष्टत: मामला बनना चाहिए । सम्यक् रूप से निर्वाचित किसी उम्मीदवार, जो किसी पद को धारण कर रहा है और उसका उपभोग कर रहा है और उस पद से संबंधित कर्तव्यों का निर्वहन कर रहा है, को मूल्यवान कानूनी अधिकार अभिनिर्धारित किया गया है और इस बात को दृष्टि में रखते हुए यह अभिकथित किया गया कि चूंकि निर्वाचित पद से हटाए जाने के आदेश का प्रभाव किसी निर्वाचित पदधारक के कार्यकाल में कटौती का प्रभाव रखता है और यह उसके ऊपर कलंक के समान है, अत: पद से हटाए जाने के लिए सुसंगत कानूनी उपबंध के अधीन कोई ऐसा आदेश पारित किए जाने के पूर्व सुस्पष्टत: आधार निर्धारित किए जाने चाहिए । इस संबंध में की गई सुसंगत मताभिव्यक्तियां निम्नलिखित हैं :–

> "विधि के नियम द्वारा शासित होने वाले किसी भी लोकतंत्र में यदि किसी व्यक्ति को किसी लोकतांत्रिक संस्था में किसी पद पर निर्वाचित किया जाता है, तो वह उम्मीदवार उस पद, जिसके लिए उसको निर्वाचित किया गया है, को धारण करने का हकदार

---

[1] ए. आई. आर. 1964 एस. सी. 364.

[2] (2002) 5 एस. सी. सी. 685.

[3] (2001) 6 एस. सी. सी. 260.

होता है, जब तक कि उसके निर्वाचन को विधि के अधीन किसी विहित प्रक्रिया द्‌वारा अपास्त नहीं कर दिया जाता । निर्वाचित उम्मीदवार को पद धारण करना चाहिए और उसका उपभोग करना चाहिए और सुसंगत अधिनियमिति द्‌वारा विनिर्दिष्ट अवधि के दौरान उस पद से संबंधित कर्तव्यों का निर्वहन करना चाहिए और यह न केवल निर्वाचित उम्मीदवार का बल्कि उस क्षेत्र या उस क्षेत्र के मतदाताओं, जिनका वह प्रतिनिधित्व करता है, का भी मूल्यवान कानूनी अधिकार है । ऐसे किसी पद से हटाया जाना एक गंभीर मामला होता है । पद से हटाया जाना पद धारक की कानूनी अवधि में कटौती करना होता है । उस निर्वाचित पदधारक पर लगाए गए कतिपय आरोपों, जिनको साबित अभिनिर्धारित किया गया है और उस उम्मीदवार को उस पद के धारण के अयोग्य पाया गया है, जिसको वह धारण करता है, को दृष्टि में रखते हुए कलंक अधिरोपित हो जाता है । इसलिए, पद से हटाए जाने के आधार की उपलब्धता का मामला स्पष्टत: अधिनियम की धारा 22 के अधीन उत्पन्न होता है और यह मामला स्पष्टत: बनना भी चाहिए । राज्य सरकार द्‌वारा किसी अध्यक्ष को उसके पद से धारा 22 के अर्थान्तर्गत अन्य बातों के साथ-साथ 'उसकी (अध्यक्ष की) शक्तियों के दुरुपयोग' के आधार पर हटाया जा सकता है । यही वह वाक्यांश है, जिसके साथ हम वर्तमान मामले में संबद्ध हैं ।"

13. **शारदा कैलाश मित्तल** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य और अन्य**[1] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने समान दृष्टिकोण अपनाते हुए इस विचार को दोहराया कि किसी लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित पद के पदधारक को हटाया जाना एक आत्यंतिक कार्रवाई है, जिसका आश्रय केवल घोर और आपवादिक परिस्थिति में लिया जाना चाहिए और न कि कर्तव्यों के निर्वहन में बरती गई लघु अनियमितताओं के मामले में । इस मामले में जो मताभिव्यक्ति की गई वह निम्नलिखित हैं :-

---

[1] (2010) 2 एस. सी. सी. 319.

"26. धारा 41-क के उपबंधों में उस तरीके के बाबत पर्याप्त दिशानिर्देश समाविष्ट नहीं हैं जिनमें शक्ति का प्रयोग किया जाना है, सिवाय इसके कि इस धारा की यह अपेक्षा है कि वह पदधारक जिसके विरुद्ध कार्रवाई की जा रही है, को सुनवाई का युक्तिसंगत अवसर प्रदान किया जाना चाहिए । शक्ति की प्रकृति और उन परिणामों, जो शक्ति के प्रयोग पर उत्पन्न होते हैं, को दृष्टि में रखते हुए यह अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए कि इस शक्ति का अवलंब राज्य सरकार द्वारा केवल अत्यंत सुदृढ़ और मजबूत कारणवश लिया जा सकता है । इस शक्ति का प्रयोग निर्वाचित पदधारक द्वारा कर्तव्यों के निर्वहन में बरती गई लघु अनियमितताओं के संबंध में नहीं किया जाना चाहिए । इस उपबंध का अर्थान्वयन कड़ाईपूर्वक किया जाना चाहिए क्योंकि पदधारक इस पद को निर्वाचन द्वारा प्राप्त करते हैं और उनको इस पद से कार्यकारी आदेश, जिसमें निर्वाचन मंडल की सहभागिता का कोई अवसर नहीं होता, द्वारा वंचित नहीं किया जा सकता है ।"

14. ऊपर निर्दिष्ट विनिश्चय संविधान के भाग IX-क के अधीन निर्वाचित पदधारकों की भूमिका और स्थिति के महत्व पर जोर देते हैं । यह निरंतर रूप से अभिनिर्धारित किया गया है कि ये निर्वाचित पदधारक निर्वाचक मंडल की इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करते हैं और उनको उनके निर्वाचित पदों से हटाया जाना उस निर्वाचक मंडल के अधिकारों को प्रभावित करता है, जिनको उनके निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा शासित किया जाना है ।

15. हमारी सुविचारित राय में संविधान के भाग IX-क के अधीन निर्वाचित पदधारक निर्वाचक मंडल को जवाबदेह होता है और उसको उसके निर्वाचित पद से हटाए जाने के दुष्परिणाम होते हैं, जो गंभीर और प्रतिकूल प्रकृति के होते हैं । निर्वाचित पदधारक का अधिकार नि:संदेह रूप से कानूनी अधिनियमिति के निबंधनों के अंतर्गत होता है और उस पद से हटाए जाने की कार्रवाई भी आरंभ की जा सकती है,

किंतु केवल विधानमंडल द्वारा अधिकथित उपबंधों के कड़ाईपूर्वक पालन के पश्चात् ।

16. 1916 के अधिनियम के अंतर्गत किसी निर्वाचित अध्यक्ष के मामले में उसको पद से हटाए जाने की प्रक्रिया 1916 के अधिनियम की धारा 48 के अधीन विहित की गई है और परिणामस्वरूप जब कभी भी अध्यक्ष को उसके निर्वाचित पद से हटाए जाने के संबंध में कोई विवाद्यक उद्भूत होता है, तो कानूनी उपबंध के अधीन विहित प्रक्रिया का कड़ाईपूर्वक पालन किया जाना अपेक्षित होता है ।

17. याची के विद्वान् काउंसेल पूर्वोक्त विधिक स्थिति को विवादित करने के समर्थ नहीं हो सके हैं कि नगर पंचायत के निर्वाचित अध्यक्ष को उसके पद से हटाए जाने के लिए प्रक्रिया 1916 के अधिनियम की धारा 48 के उपबंधों के अनुसार होनी चाहिए ।

18. हम पूर्वोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए वर्तमान रिट याचिका पर याचित अनुतोषों को प्रदान किए जाने के बाबत विचार करने के लिए आनत नहीं हैं और रिट याचिका तद्नुसार खारिज की जाती है ।

19. याची को यह अधिकार होगा कि वह 1916 के अधिनियम के निबंधनों के अनुसार कानूनी उपबंधों का पालन करते हुए उसको उपलब्ध अनुतोषों का आश्रय ले ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

एस. के. इंडस्ट्रीज (मैसर्स)

बनाम

उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य

[2020 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 20423]

तारीख 3 दिसंबर, 2020

न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी और न्यायमूर्ति डा. योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26) – धारा 11 और 30 – उच्च न्यायालय द्वारा मध्यस्थ की नियुक्ति के पूर्व विवाद के पक्षों द्वारा संबंधित प्राधिकारियों के समक्ष समझौते के लिए आवेदन प्रस्तुत किया जाना – 1996 के अधिनियम की धारा 30 का उद्देश्य और प्रयोजन माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा कार्यवाहियों के लंबन के दौरान माध्यस्थम्, सुलह और अन्य प्रक्रियाओं का प्रयोग करते हुए विवाद के निपटारों को प्रोत्साहित करना है – विवाद को माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट नहीं किया गया और कोई माध्यस्थम् कार्यवाही लंबित नहीं है, इसलिए वर्तमान प्रक्रम पर विवाद के निपटारे और माध्यस्थम् पंचाट तैयार किए जाने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता ।

संक्षेप में मामले के तथ्य हैं कि वर्तमान रिट याचिका याची के विरुद्ध 40,60,102/- रुपए की रकम की वसूली के लिए तारीख 19 सितंबर, 2018 के वसूली प्रमाणपत्र के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसे तारीख 31 अगस्त, 2017 को जारी की गई धान क्रय नीति 2017-18 के खण्ड 19 के अनुसार जारी किया गया । याची का दावा है कि उसने संबंधित प्राधिकारियों के समक्ष प्रमाणित विपणन प्रतिनिधि करार के खंड 12 के अनुसार 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 30 के अधीन विवाद के निपटारे की ईप्सा करते हुए आवेदन फाइल किया । याची ने यह दावा भी किया कि उसने निपटारा कार्यवाहियों के लंबन के

दौरान वसूली कार्यवाहियों को स्थगित किए जाने के लिए आवेदन फाइल किया है । याची के विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि 1966 के अधिनियम की धारा 30 के अधीन निपटारे के लिए प्रस्तुत किया गया आवेदन प्राधिकारियों के समक्ष लंबित है, जिसमें कोई विनिश्चय पारित नहीं किया गया है और तद्नुसार याची के विरुद्ध वसूली की कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती । रिट याचिका में वर्णित मामले के अनुसार याची कंपनी एक चावल मिल का संचालन करती है, जिसका राज्य प्राधिकारियों के साथ वर्ष 2017-18 की धान क्रय नीति के अंतर्गत क्रय किए गए धान के प्रसंस्करण के लिए करार निष्पादित हुआ था । याची के विरुद्ध आरंभ की गई वसूली कार्यवाही कतिपय चूकों के संबंध में है, जिनको याची ने विवादित किया है और तद्नुसार निवेदन किया है कि प्रमाणित विपणन प्रतिनिधि करार के अधीन माध्यस्थम् करार को दृष्टि में रखते हुए विवाद को माध्यस्थम् के लिए निर्दिष्ट किया जाए । उन्होंने आगे निवेदन किया कि 1996 के अधिनियम की धारा 30 के अधीन याची द्वारा स्थगन के लिए आवेदन के साथ विवाद के निपटारे के लिए आवेदन प्रस्तुत किया गया है और इसलिए मध्यवर्ती अवधि के दौरान वसूली कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती । याचिका का निस्तारण करते हुए,

अभिनिर्धारित – यद्यपि हमारे समक्ष उपस्थित मामले में राज्य सरकार की धान क्रय नीति के अधीन क्रय किए गए धान के प्रसंस्करण के लिए याची और राज्य प्राधिकारियों के मध्य करार अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया गया है, फिर भी याची का यह दावा है कि पूर्वोक्त करार के खंड 12 में माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है, जिसके अधीन करार के संबंध में करार की विषयवस्तु के रूप में प्रत्येक विवाद, मतभेद का प्रश्न कतिपय पदनामित प्राधिकारियों द्वारा माध्यस्थम् के लिए निर्दिष्ट किया जाएगा । उपरोक्त परिस्थितियों में, जहां पक्षों के मध्य नियुक्ति प्रक्रिया के संबंध में सहमति हो चुकी है, मध्यस्थों की नियुक्ति 1966 के अधिनियम की धारा 11 की उपधारा (6) के अधीन की जानी है । 1966 के अधिनियम की धारा 11 की उपधारा (6) यह उपबंधित करती है कि जहां पक्षों

द्‌वारा सहमत नियुक्ति प्रक्रिया के अधीन (i) कोई पक्ष अपेक्षित प्रक्रिया के अधीन कार्य करने में विफल रहता है या (ii) दोनों नियुक्त माध्यस्थम्‌ किसी ऐसे करार पर पहुंचने में विफल रहते हैं, जिस पर उनसे प्रकिया के अधीन पहुंचने की प्रत्याक्षा की गई थी, या (iii) किसी संस्था को सम्मिलित करते हुए कोई व्यक्ति किसी ऐसे कार्य को करने में विफल हो जाता है, जो उसको प्रक्रिया के अधीन सौंपा गया था, तो मध्यस्थ (थों) की नियुक्ति संबद्ध पक्षों द्‌वारा प्रस्तुत किए गए आवेदन पर की जाएगी । वर्तमान मामले के तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए यदि प्रमाणित विपणन प्रतिनिधि करार में कोई माध्यस्थम्‌ खंड समाविष्ट होता, जैसाकि दलील याची द्‌वारा दी गई, तो याची को यह अधिकार है कि वह माध्यस्थम्‌ खण्ड का अवलंब ले । जहां तक 1966 के अधिनियम की धारा 30 के अधीन स्थगन प्रार्थनापत्र के साथ फाइल किए गए विवाद के निपटारे के लिए फाइल की गई दावा याचिका का संबंध है, हम इस तथ्य का अवलंब लेते हैं कि 1966 के अधिनियम की धारा 30, जिसके अधीन यह उपबंधित किया गया है कि यदि माध्यस्थम्‌ कार्यवाहियों के दौरान दोनों पक्ष विवाद का निपटारा करते हैं, तो माध्यस्थम्‌ अधिकरण कार्यवाहियों को समाप्त कर देगा और दोनों पक्षों के मध्य निपटारे को दोनों पक्षों के मध्य सहमत शर्तों के आधार पर माध्यस्थम्‌ पंचाट के स्वरूप में अभिलिखित करेगा । 1996 की अधिनियम की धारा 30 का उद्देश्य और प्रयोजन माध्यस्थम्‌ अधिकरण के समक्ष माध्यस्थम्‌ कार्यवाहियों के लंबन के दौरान मध्यस्थता, सुलह और अन्य प्रक्रियाओं का प्रयोग करते हुए माध्यस्थम्‌ अधिकरण द्‌वारा विवाद के निपटारे को प्रोत्साहित करना है । वर्तमान मामले में विवाद को अभी तक मध्यस्थता के लिए माध्यस्थम्‌ अधिकरण को निर्दिष्ट नहीं किया गया है और कोई माध्यस्थम्‌ कार्यवाही लंबित नहीं है, इसलिए 1966 के अधिनियम की धारा 30 के अधीन विवाद के निपटारे का प्रश्न उद्भूत नहीं होता और उसके वर्तमान के अनुसार माध्यस्थम्‌ पंचाट के तैयार किए जाने का वर्तमान प्रक्रम पर प्रश्न उद्भूत नहीं होता । (पैरा 8, 9, 10, 11, 12, 13 और 14)

आरंभिक रिट अधिकारिता : **2020 की रिट याचिका (सिविल) संख्या 20423.**

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से सर्वश्री रामेन्द्र अस्थाना और विजय कुमार ओझा

प्रत्यर्थी की ओर से मुख्य स्थाई काउंसेल

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सूर्य प्रकाश केसरवानी और न्यायमूर्ति डा. योगेन्द्र कुमार श्रीवास्तव ने दिया ।

आदेश

वर्तमान रिट याचिका निम्नलिखित अनुतोषों के लिए प्रार्थना करते हुए फाइल की गई है :-

> (क) प्रत्यर्थी संख्या 1 और 2 को माध्यस्थम् खंड (रिट याचिका के संलग्नक 7 में समाविष्ट) को या तीन माह के भीतर या उस लघु अवधि के भीतर, जैसाकि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के अधीन आवश्यक प्रतीत किया जाए, निर्णीत किए जाने के प्रयोजनार्थ आदेशित करते हुए परमादेश की प्रकृति में रिट, आदेश या निर्देश जारी किए जाएं ।
>
> (ख) प्रत्यर्थियों और उनके अधीनस्थ कर्मचारियों इत्यादि को तारीख 19 सितंबर, 2018 के वसूली प्रमाणपत्र, जो पूर्वोक्त (माध्यस्थम् कार्यवाहियों) माध्यस्थम् दावा याचिका की प्रति रिट याचिका का संलग्न 7 है की विषयवस्तु है, के आधार पर कोई प्रपीड़क उपाय न अपनाए जाने के लिए परमादेश की प्रकृति में रिट आदेश या निर्देश जारी किए जाने के द्वारा निर्देशित किया जाए ।"

2. जिस मुख्य शिकायत को प्रस्तुत किया जाना ईप्सित है, 40,60,102/- रुपए की रकम की वसूली के लिए तारीख 19 सितंबर, 2018 के वसूली प्रमाणपत्र के विरुद्ध प्रस्तुत की गई है, जिसे याची के विरुद्ध तारीख 31 अगस्त, 2017 को जारी की गई धान क्रय नीति 2017-18 के खंड 19 के अनुसार जारी किया गया था ।

3. याची का दावा है कि उसने प्रमाणित विपणन प्रतिनिधि करार के खंड 12 के अनुसार 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 30 के अधीन विवाद के निपटारे की ईप्सा करते हुए आवेदन फाइल किया है । याची ने यह दावा भी किया है कि उसने निपटारा कार्यवाहियों के लंबन के दौरान वसूली कार्यवाहियों को स्थगित किए जाने के लिए आवेदन फाइल किया है ।

4. याची के विद्वान् काउंसेल ने यह दलील दी कि 1966 के अधिनियम की धारा 30 के अधीन निपटारे के लिए प्रस्तुत किया गया पूर्वोक्त आवेदन प्राधिकारियों के समक्ष लंबित है, जिसमें कोई विनिश्चय पारित नहीं किया गया है और तद्नुसार याची के विरुद्ध वसूली की कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती ।

5. रिट याचिका में वर्णित मामले के अनुसार याची कंपनी एक चावल मिल का संचालन करती है, जो राज्य प्राधिकारियों के साथ वर्ष 2017-18 की धान क्रय नीति के अंतर्गत राज्य सरकार द्वारा क्रय किए गए धान के प्रसंस्करण के लिए एक करार में प्रविष्ट हुई थी । याची के विरुद्ध आरंभ की गई वसूली कार्यवाहियों कतिपय चूकों के संबंध में है, जिनको याची ने विवादित किया है और तद्नुसार यह निवेदन किया है कि प्रमाणित विपणन प्रतिनिधि करार के अधीन माध्यस्थम् करार को दृष्टि रखते हुए इस विवाद को माध्यस्थम् के लिए निर्दिष्ट किया जाए । उन्होंने आगे निवेदन किया कि 1996 के अधिनियम की धारा 30 के अधीन याची द्वारा स्थगन आवेदन के साथ विवाद के निपटारे के लिए आवेदन प्रस्तुत किया गया है और इसलिए मध्यवर्तीय अवधि के दौरान वसूली कार्यवाही आरंभ नहीं की जा सकती ।

6. माध्यस्थम् के संबंध में विधि 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम के निबंधनों द्वारा शासित होती है और मध्यस्थों की नियुक्ति के लिए प्रक्रिया उक्त अधिनियम की धारा 11 के अधीन उपबंधित है ।

7. निर्देश में सुविधा की दृष्टि 1996 के अधिनियम की धारा 11 और धारा 30 के अधीन समाविष्ट सुसंगत कानूनी उपबंधों को नीचे उद्धृत किया जा रहा है :–

"**11. मध्यस्थों की नियुक्ति** – (1) किसी भी राष्ट्रिकता का कोई व्यक्ति, जब तक कि पक्षकारों द्वारा अन्यथा करार न किया गया हो, मध्यस्थ हो सकता है ।

(2) उपधारा (6) के अधीन रहते हुए, पक्षकार मध्यस्थ या मध्यस्थों को नियुक्त करने के लिए किसी प्रक्रिया पर करार करने के लिए स्वतंत्र हैं ।

(3) उपधारा (2) में निर्दिष्ट किसी करार के न होने पर, तीन मध्यस्थों वाले किसी मध्यस्थ में, प्रत्येक पक्षकार एक मध्यस्थ नियुक्त करेगा और दो नियुक्त मध्यस्थ ऐसे तीसरे मध्यस्थ को नियुक्त करेंगे, जो पीठासीन मध्यस्थ के रूप में कार्य करेगा ।

(4) यदि उपधारा (3) की नियुक्ति की प्रक्रिया लागू होती है और –

(क) कोई पक्षकार किसी मध्यस्थ को नियुक्त करने में, दूसरे पक्षकार से ऐसा करने के किसी अनुरोध की प्राप्ति से तीस दिन के भीतर, असफल रहता है, या

(ख) दो नियुक्त मध्यस्थ अपनी नियुक्ति की तारीख से तीस दिन के भीतर तीसरे मध्यस्थ पर सहमत होने में असफल रहते हैं,

तो नियुक्ति, किसी पक्षकार के अनुरोध पर, मुख्य न्यायमूर्ति द्वारा या उसके द्वारा पदाभिहित किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा की जाएगी ।

(5) उपधारा (2) में निर्दिष्ट किसी करार के न होने पर, एकमात्र मध्यस्थ वाले किसी मध्यस्थ में, यदि पक्षकार किसी मध्यस्थ पर, एक पक्षकार द्वारा दूसरे पक्षकार से किए गए किसी अनुरोध की प्राप्ति से तीस दिन के भीतर इस प्रकार सहमत होने में असफल रहते हैं, तो नियुक्ति, किसी पक्षकार के अनुरोध पर मुख्य न्यायमूर्ति या उसके द्वारा पदाभिहित किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा की जाएगी ।

(6) जहां पक्षकारों द्वारा करार पाई गई किसी नियुक्ति की प्रक्रिया के अधीन –

(क) कोई पक्षकार उस प्रक्रिया के अधीन अपेक्षित रूप से कार्य करने में असफल रहता है, या

(ख) पक्षकार अथवा दो नियुक्त मध्यस्थ, उस प्रक्रिया के अधीन उनसे अपेक्षित किसी करार पर पहुंचने में असफल रहते हैं, या

(ग) कोई व्यक्ति, जिसके अन्तर्गत कोई संस्था है, उस प्रक्रिया के अधीन उसे सौपें गए किसी कृत्य का निष्पादन करने में असफल रहता है,

वहां कोई पक्षकार, मुख्य न्यायमूर्ति या उसके द्वारा पदाभिहित किसी व्यक्ति या संस्था से, जब तक कि नियुक्ति प्रक्रिया के किसी करार में नियुक्त सुनिश्चित कराने के अन्य साधनों के लिए उपबंध न किया गया हो, आवश्यक उपाय करने के लिए अनुरोध कर सकता है ।

(7) उपधारा (4) या उपधारा (5) या उपधारा (6) के अनुसार मुख्य न्यायमूर्ति या उसके द्वारा पदाभिहित व्यक्ति या संस्था को सौंपे गए किसी विषय पर कोई विनिश्चय अंतिम होगा ।

(8) किसी मध्यस्थ की नियुक्ति करने में मुख्य न्यायमूर्ति या उसके द्वारा पदाभिहित व्यक्ति या संस्था, निम्नलिखित का सम्यक् रूप से ध्यान रखेगी –

(क) पक्षकारों के करार द्वारा अपेक्षित मध्यस्थ की कोई अर्हता, और

(ख) अन्य बातें, जिनसे किसी स्वतंत्र और निष्पक्ष मध्यस्थ की नियुक्ति सुनिश्चित किए जाने की संभावना है ।

(9) किसी अन्तरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् में एकमात्र या तीसरे मध्यस्थ की नियुक्ति की दशा में, जहां पक्षकार विभिन्न

राष्ट्रीयताओं के हैं वहां भारत का मुख्य न्यायमूर्ति या उसके द्वारा पदाभिहित व्यक्ति या संस्था, पक्षकारों की राष्ट्रीयता से भिन्न किसी राष्ट्रीयता वाला कोई मध्यस्थ नियुक्त कर सकेगी ।

(10) मुख्य न्यायमूर्ति, कोई ऐसी स्कीम बना सकेगा जो वह उपधारा (4) या उपधारा (5) या उपधारा (6) द्वारा उसे सौंपे गए विषयों के निपटारे के लिए समुचित समझे ।

(11) जहां विभिन्न उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायमूर्तियों या उनके पदाभिहितों से उपधारा (4) या उपधारा (5) या उपधारा (6) के अधीन एक से अधिक बार अनुरोध किया गया है, वहां केवल वही मुख्य न्यायमूर्ति या उसका पदाभिहित ही, जिससे सुसंगत उपधारा के अधीन प्रथम बार अनुरोध किया गया है, ऐसे अनुरोध की बाबत विनिश्चय करने के लिए सक्षम होगा ।

(12) (क) जहां उपधारा (4), उपधारा (5), उपधारा (6), उपधारा (7), उपधारा (8) और उपधारा (10) में निर्दिष्ट विषय किसी अन्तरराष्ट्रीय वाणिज्यिक माध्यस्थम् में उद्भूत होते हैं वहां उन उपधाराओं में "मुख्य न्यायमूर्ति" के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह "भारत के मुख्य न्यायमूर्ति" के प्रति निर्देश है ।

(ख) जहां उपधारा (4), उपधारा (5), उपधारा (6), उपधारा (8) और उपधारा (10) में निर्दिष्ट विषय किसी अन्य माध्यस्थम् में उद्भूत होते हैं वहां उन उपधाराओं में "मुख्य न्यायमूर्ति" के प्रति निर्देश का यह अर्थ लगाया जाएगा कि वह ऐसे उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति के प्रति निर्देश है जिसकी स्थानीय परिसीमाओं के भीतर धारा 2 की उपधारा (1) के खंड (ङ) में निर्दिष्ट प्रधान सिविल न्यायालय स्थित है और, जहां स्वयं उच्च न्यायालय ही उस खंड में निर्दिष्ट न्यायालय है, वहां उस उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायमूर्ति के प्रति निर्देश है ।

30. **समझौता** – (1) माध्यस्थम् अधिकरण के लिए, विवाद के समझौते को प्रोत्साहित करना, माध्यस्थम् अधिकरण, माध्यस्थम् करार से बेमेल नहीं है और पक्षकारों की सहमति से,

माध्यस्थम् अधिकरण, समझौता प्रोत्साहित करने के लिए माध्यस्थम् कार्यवाहियों के दौरान, किसी समय मध्यस्थता, सुलह या अन्य प्रक्रियाओं का प्रयोग कर सकता है ।

(2) यदि माध्यस्थम् कार्यवाहियों के दौरान, पक्षकार विवाद तय करते हैं तो माध्यस्थम् अधिकरण, कार्यवाहियों का समापन करेगा और यदि, पक्षकारों द्वारा अनुरोध किया जाए और माध्यस्थम् अधिकरण उसके लिए आक्षेप न करे, तो करार पाए गए निबंधनों पर समझौते को माध्यस्थम् पंचाट के रूप में अभिलिखित करेगा ।

(3) करार पाए गए निबंधनों पर माध्यस्थम् पंचाट धारा 31 के अनुसार दिया जाएगा और उसमें वह अभिकथित होगा कि वह माध्यस्थम् पंचाट है ।

(4) करार पाए गए निबंधनों पर माध्यस्थम् पंचाट की वही प्रास्थिति होगी और उसका वही प्रभाव होगा, जो विवाद के सार पर किसी अन्य माध्यस्थम् पंचाट का होता है ।"

8. यद्यपि हमारे समक्ष उपस्थित मामले में राज्य सरकार की धान क्रय नीति के अधीन क्रय किए गए धान के प्रसंस्करण के लिए याची और राज्य प्राधिकारियों के मध्य करार अभिलेख पर प्रस्तुत नहीं किया गया है, फिर भी याची का यह दावा है कि पूर्वोक्त करार के खंड 12 में माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है, जिसके अधीन करार के संबंध में या करार की विषयवस्तु के रूप में प्रत्येक विवाद, मतभेद का प्रश्न कतिपय पदनामित प्राधिकारियों द्वारा माध्यस्थम् के लिए निर्दिष्ट किया जाएगा ।

9. उपरोक्त परिस्थितियों में, जहां पक्षों के मध्य नियुक्ति प्रक्रिया के संबंध में सहमति हो चुकी है, मध्यस्थों की नियुक्ति 1966 के अधिनियम की धारा 11 की उपधारा (6) के अधीन की जानी है ।

10. 1996 के अधिनियम की धारा 11 की उपधारा (6) यह उपबंधित करती है कि जहां पक्षों द्वारा सहमत नियुक्ति प्रक्रिया के अधीन (i) कोई पक्ष अपेक्षित प्रक्रिया के अधीन कार्य करने में विफल रहता है या (ii) दोनों पक्ष या दोनों नियुक्त मध्यस्थ किसी ऐसे करार

पर पहुंचने में विफल रहते हैं, जिस पर उनसे प्रक्रिया के अधीन पहुंचने की प्रत्याक्षा की गई थी, या (iii) किसी संस्था को सम्मिलित करते हुए कोई व्यक्ति किसी ऐसे कार्य को करने में विफल हो जाता है, जो उसको प्रक्रिया के अधीन सौंपा गया था, तो मध्यस्थ(थों) की नियुक्ति संबंद्ध पक्षों द्वारा प्रस्तुत किए गए आवेदन पर की जाएगी ।

11. वर्तमान मामले के तथ्यों को दृष्टि में रखते हुए यदि प्रमाणित विपणन प्रतिनिधि करार में कोई माध्यस्थम् खंड समाविष्ट होता, जैसाकि दलील याची द्वारा दी गई, तो याची को यह अधिकार है कि वह माध्यस्थम् खंड का अवलंब ले ।

12. जहां तक 1996 की अधिनियम की धारा 30 के अधीन स्थगन प्रार्थनापत्र के साथ फाइल किए गए विवाद के निपटारे के लिए फाइल की गई दावा याचिका का संबंध है, हम इस तथ्य का अवलंब लेते हैं कि 1966 के अधिनियम की धारा 30, जिसके अधीन यह उपबंधित किया गया है कि यदि माध्यस्थम् कार्यवाहियों के दौरान दोनों पक्ष विवाद का निपटारा करते हैं, तो माध्यस्थम् अधिकरण कार्यवाहियों को समाप्त कर देगा और दोनों पक्षों के मध्य निपटारे को दोनों पक्षों के मध्य सहमत शर्तों के आधार पर माध्यस्थम् पंचाट के स्वरूप में अभिलिखित करेगा ।

13. 1996 की अधिनियम की धारा 30 का उद्देश्य और प्रयोजन माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष माध्यस्थम् कार्यवाहियों के लंबन के दौरान मध्यस्थता, सुलह और अन्य प्रक्रियाओं का प्रयोग करते हुए माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा विवाद के निपटारे को प्रोत्साहित करना है ।

14. वर्तमान मामले में विवाद को अभी तक मध्यस्थता के लिए माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट नहीं किया गया है और कोई माध्यस्थम् कार्यवाही लंबित नहीं है, इसलिए 1966 के अधिनियम की धारा 30 के अधीन विवाद के निपटारे का प्रश्न उद्भूत नहीं होता और उसके निबंधनों के अनुसार माध्यस्थम् पंचाट के तैयार किए जाने का वर्तमान प्रक्रम पर प्रश्न उद्भूत नहीं होता ।

15. इस प्रक्रम पर याची के विद्वान् काउंसेल ने यह प्रार्थना की कि उनको माध्यस्थम् खंड, जैसाकि प्रमाणित विपणन प्रतिनिधि करार में समाविष्ट है, का अवलंब मध्यस्थ की नियुक्ति संबद्ध प्राधिकारी के समक्ष समुचित आवेदन प्रस्तुत किए जाने के द्वारा लेने की अनुज्ञा प्रदान की जाए और इसमें विफल रहने पर माध्यस्थम् खंड के अधीन उपबंधित प्रक्रिया के अधीन कार्रवाई करने की अनुज्ञा प्रदान की जाए और वह 1996 के अधिनियम की धारा 11 की उपधारा (6) के अधीन उपबंधों का अवलंब ले सकता है ।

16. इस संबंध में हम यह मताभिव्यक्ति करते हैं कि यदि याची राज्य अभिकरणों द्वारा क्रय किए गए धान के प्रसंस्करण के लिए राज्य प्राधिकारियों के साथ किसी करार में प्रविष्ट होता है और करार में कोई माध्यस्थम् खंड समाविष्ट है, जैसाकि याची द्वारा प्रकथन किया गया है, तो याची को यह अधिकार होगा कि वह समुचित आवेदन संबद्ध प्राधिकारी के समक्ष समुचित आवेदन करार के निबंधनों के अनुसार विवाद को माध्यस्थम् के लिए निर्दिष्ट किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत करे ।

17. इस रिट याचिका का निपटारा पूर्वोक्त मताभिव्यक्तियों के साथ किया जाता है ।

18. यहां पर यह स्पष्ट किया जाता है कि हमने दावे के गुणागुण पर कोई विचार व्यक्त नहीं किया है, जैसेकि ईप्सा याची द्वारा की गई थी ।

रिट याचिका का निपटारा किया गया ।

शु.

रेवा पाण्डेय

बनाम

रमेश

(2019 की सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या 19)

तारीख 23 जून, 2020

न्यायमूर्ति लोकपाल सिंह

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 1, नियम 10 – वादग्रस्त संपत्ति के सह-स्वामी के विरुद्ध निष्कासन और स्थायी व्यादेश के लिए वाद फाइल किया जाना – सह-स्वामी की मृत्यु के पश्चात् एकमात्र जीवित विधिक उत्तराधिकारी द्वारा वाद में पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के लिए आवेदन फाइल किया जाना – सह-स्वामी का एकमात्र उत्तरजीवी विधिक उत्तराधिकारी वाद का आवश्यक पक्ष है और वाद में अंतर्वलित प्रश्नों के विनिर्धारण के लिए पक्ष बनने का हकदार है ।

हमारे समक्ष उपस्थित पुनरीक्षण सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अधीन 2015 के मूल वाद संख्या 4, श्रीमती रेवा पाण्डेय बनाम रमेश वाले मामले में सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ खंड) द्वारा तारीख 6 फरवरी, 2019 को पारित आदेश, जिसके द्वारा पुनरीक्षणकर्ता/वादी द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 सपठित धारा 151 के अधीन हिमाद्री पाण्डेय को पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किए गए आवेदन को खारिज कर दिया गया था, के विरुद्ध फाइल किया गया है । मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि यह है कि पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने अल्मोड़ा के मोहल्ला मल्लाकसूर स्थित वादग्रस्त संपत्ति के सह-स्वामी होने के नाते प्रत्यर्थी/प्रतिवादी के विरुद्ध अल्मोड़ा के सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ खंड) के समक्ष आज्ञापक और स्थायी व्यादेश और साथ ही अंत:कालीन लाभ की डिक्री के लिए 2015 का मूल

वाद संख्या 4 यह अभिकथित करते हुए फाइल किया कि वादग्रस्त संपत्ति का कब्जा प्रतिवादी को अनुज्ञप्ति के आधार पर इस शर्त के अंतर्गत दिया गया था कि जब कभी भी इस संपत्ति की आवश्यकता पुनरीक्षणकर्ता/वादी को होगी, तो वादी के पति द्वारा अनुज्ञप्ति को मौखिक रूप से समाप्त किया जा सकता है । अनुज्ञप्ति को तारीख 5 जनवरी, 2014 को मौखिक रूप से समाप्त कर दिया गया, किंतु प्रतिवादी ने वादग्रस्त संपत्ति की अनुज्ञप्ति के अंतर्गत आने वाले भाग को रिक्त नहीं किया । प्रत्यर्थी/प्रतिवादी ने वाद का प्रतिवाद किया और लिखित कथन फाइल किया । विचारण न्यायालय ने पक्षों के अभिवचनों के आधार पर वाद में आवश्यक विवाद्यक विरचित किए । इसी दौरान पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 सपठित धारा 151 के अधीन हिमाद्री पाण्डेय को वाद ने पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन फाइल किया । प्रत्यर्थी/वादी ने इस आवेदन का उत्तर और आक्षेप फाइल किए । विचारण न्यायालय ने पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुने जाने के पश्चात् तारीख 6 फरवरी, 2019 के आदेश द्वारा हिमाद्री पाण्डेय को पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किए गए आवेदन को खारिज कर दिया । पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने तारीख 6 फरवरी, 2019 के आक्षेपित आदेश के विरुद्ध पुनर्विलोकन आवेदन फाइल किया, जिसको भी तारीख 26 फरवरी, 2019 को खारिज कर दिया गया । पुनरीक्षण याचिका मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – वाद में पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किए गए आवेदन के परिशीलन से यह ज्ञात होता है कि पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने हिमाद्री पाण्डेय पुत्र स्वर्गीय अनिल कुमार पाण्डेय को वाद में सह प्रतिवादी के रूप में इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए संयोजित किए जाने की ईप्सा की है कि प्रत्यर्थी/प्रतिवादी ने अपने ही विरुद्ध आत्मघाती अभिवाक् किए हैं कि उसको वादग्रस्त संपत्ति के कब्जे में श्री अनिल कुमार पाण्डेय द्वारा सम्मिलित किया गया था और वादग्रस्त संपत्ति के स्वामित्व का उसका अधिकार प्रतिकूल कब्जे द्वारा परिपक्व हो गया है । उसने आवेदन में अभिकथित किया कि हिमाद्री

पाण्डेय, स्वर्गीय अनिल कुमार पाण्डेय का एक मात्र जीवित विधिक उत्तराधिकारी है और इसलिए वह वाद का आवश्यक और उचित पक्षकार है । पक्षों को संयोजित किए जाने के संबंध में सामान्य नियम यह है कि वह व्यक्ति, जो वादग्रस्त संपत्ति में कोई अधिकार या हित रखता है, को पक्ष के रूप में संयोजित किया जा सकता है और इस बाबत वादी को निर्णय लेना है कि वह वाद में किससे मुकदमेबाजी करना चाहता है और उसको किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध वाद चलाने के लिए विवश नहीं किया जा सकता, जिसके विरुद्ध वह किसी अनुतोष की ईप्सा नहीं करता । वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी/प्रतिवादी का उसके द्वारा फाइल किए गए लिखित कथन में स्वीकृत रूप से पक्षकथन यह है कि उसको वादग्रस्त संपत्ति के कब्जे में अनिल कुमार पाण्डेय, जो वादग्रस्त संपत्ति के स्वामी थे, द्वारा स्वीकृत किया गया था । पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने प्रत्यर्थी/प्रतिवादी के विरुद्ध आज्ञापक और स्थायी व्यादेश की डिक्री के लिए वाद फाइल किया है और प्रतिवादी को इस बाबत निर्देशित किए जाने की ईप्सा की है कि वह वादग्रस्त संपत्ति का शांतिपूर्वक कब्जा उसको हस्तगत कर दे और इस संपत्ति के संबंध में किसी तृतीय पक्ष का हित सृजित न करे और साथ ही वादकालीन लाभ के अनुतोष की भी ईप्सा की है । श्री अनिल कुमार पाण्डेय की मृत्यु हो चुकी है और श्री हिमाद्री पाण्डेय श्री अनिल कुमार पाण्डेय के एकमात्र उत्तरजीवी विधिक उत्तराधिकारी हैं । पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने श्री हिमाद्री पाण्डेय को वाद में सह-प्रतिवादी के रूप में पक्ष बनाए जाने की ईप्सा की है । पूर्वोक्त निर्णयों में अधिकथित विनिश्चयानुपात के अनुसार वाद का वादी, जो वाद का स्वामी होता है, उस व्यक्ति को चुनने का अधिकार रखता है, जिसके विरुद्ध वह मुकदमा चलाना चाहता है । अत: मेरी सुविचारित राय में श्री हिमाद्री पाण्डेय वाद के उचित पक्ष हैं, जिनकी उपस्थिति वाद की कार्यवाही में अंतर्वलित प्रश्नों के संपूर्ण और अंतिम विनिश्चय के लिए आवश्यक है । विचारण न्यायालय ने इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए प्रयोजनार्थ पुनरीक्षणकर्ता/वादी पक्ष संयोजित किए जाने के द्वारा प्रस्तुत किए गए पक्ष आवेदन को खारिज करके अवैधता कारित की । (पैरा 5, 6 और 8)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2018]	(2018) 2 एस. सी. सी. 352 = ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 682 : **कर्नाटक दास और अन्य** बनाम **नाबाकुमार दास और अन्य** ;	7
[2015]	(2015) 13 एस. सी. सी. 579 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 1264 : **बालू राम** बनाम **पी. चेल्लाथनगम और अन्य** ।	6

पुनरीक्षण (सिविल) अधिकारिता : 2019 की सिविल पुनरीक्षण याचिका संख्या 19.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 115 के अधीन पुनरीक्षण याचिका ।

याची की ओर से श्री प्यूष गर्ग

प्रत्यर्थियों की ओर से –

आदेश

हमारे समक्ष उपस्थित पुनरीक्षण सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अधीन 2015 के मूल वाद संख्या 4, **श्रीमती रेवा पाण्डेय** बनाम **रमेश** वाले मामले में सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ खंड) द्वारा तारीख 6 फरवरी, 2019 को पारित आदेश, जिसके द्वारा पुनरीक्षणकर्ता/वादी द्वारा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1 नियम 10 सपठित धारा 151 के अधीन **हिमाद्री पाण्डेय** को पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किए गए आवेदन को खारिज कर दिया गया, के विरुद्ध फाइल किया गया है ।

2. इस मामले के तथ्यात्मक पृष्ठभूमि यह है कि पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने अल्मोड़ा के मोहल्ला मल्लाकसूर स्थित वादग्रस्त संपत्ति के सह-स्वामी होने के नाते प्रत्यर्थी/प्रतिवादी के विरुद्ध अल्मोड़ा के सिविल न्यायाधीश (वरिष्ठ खंड) के समक्ष आज्ञापक और स्थायी व्यादेश और

साथ ही अंत:कालीन लाभ की डिक्री के लिए 2015 का मूल वाद संख्या 4 यह अभिकथित करते हुए फाइल किया कि वादग्रस्त संपत्ति प्रतिवादी को अनुज्ञप्ति के आधार पर इस शर्त के अधीन दी गई थी कि जब कभी भी इस संपत्ति की आवश्यकता पुनरीक्षणकर्ता/वादी को होगी, वादी के पति द्वारा अनुज्ञप्ति को मौखिक रूप से समाप्त कर दिया जाएगा । अनुज्ञप्ति को तारीख 5 जनवरी, 2014 को मौखिक रूप से समाप्त कर दिया गया किंतु प्रतिवादी ने वादग्रस्त संपत्ति के अनुज्ञप्ति के अंतर्गत आने वाले भाग को रिक्त नहीं किया । प्रत्यर्थी/प्रतिवादी ने वाद का प्रतिवाद किया और लिखित कथन फाइल किया । विचारण न्यायालय ने पक्षों के अभिवचनों के आधार पर वाद में आवश्यक विवाद्यक विरचित किए । इसी दौरान पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 1, नियम 10 सपठित धारा 151 के अधीन हिमाद्री पाण्डेय को वाद ने पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन फाइल किया । प्रत्यर्थी/वादी ने इस आवेदन का उत्तर और आक्षेप फाइल किए । विचारण न्यायालय ने पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुने जाने के पश्चात् तारीख 6 फरवरी, 2019 के आदेश द्वारा हिमाद्री पाण्डेय को पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किए गए आवेदन को खारिज कर दिया । पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने तारीख 6 फरवरी, 2019 के आक्षेपित आदेश के विरुद्ध पुनर्विलोकन आवेदन फाइल किया, जिसको भी तारीख 26 फरवरी, 2019 को खारिज कर दिया गया ।

3. मैंने पक्षों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और फाइल पर उपलब्ध सामग्री का परिशीलन किया ।

4. पुनरीक्षणकर्ता के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किए गए आवेदन को अस्वीकृत किए जाने में विचारण न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण पूर्णत: दोषपूर्ण है चूंकि वाद पुनरीक्षणकर्ता/वादी द्वारा फाइल किया गया है अत: उसको अपने विरोधियों को चुनने का अधिकार है ।

5. वाद में पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किए गए आवेदन के परिशीलन से यह ज्ञात होता है कि पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने हिमाद्री पाण्डेय पुत्र स्वर्गीय अनिल कुमार पाण्डेय

को वाद में सह प्रतिवादी के रूप में इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए संयोजित किए जाने की ईप्सा की है कि प्रत्यर्थी/प्रतिवादी ने अपने ही विरुद्ध आत्मघाती अभिवाक् किए हैं कि उसको वादग्रस्त संपत्ति के कब्जे में श्री अनिल कुमार पाण्डेय द्वारा सम्मिलित किया गया था और वादग्रस्त संपत्ति के स्वामित्व का उसका अधिकार प्रतिकूल कब्जे द्वारा परिपक्व हो गया है । उसने आवेदन में अभिकथित किया कि हिमाद्री पाण्डेय, अनिल कुमार पाण्डेय का एक मात्र जीवित विधिक उत्तराधिकारी है और इसलिए वह वाद का आवश्यक और उचित पक्षकार है ।

6. पक्षों को संयोजित किए जाने के संबंध में सामान्य नियम यह है कि वह व्यक्ति, जो वादग्रस्त संपत्ति में कोई अधिकार या हित रखता है, को पक्ष के रूप में संयोजित किया जा सकता है और इस बाबत वादी को निर्णय लेना है कि वह वाद में किससे मुकदमेबाजी करना चाहता है और उसको किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध वाद चलाने के लिए विवश नहीं किया जा सकता, जिसके विरुद्ध वह किसी अनुतोष की ईप्सा नहीं करता । विधि की इस प्रतिपादना के पक्ष में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **बालू राम** बनाम **पी. चेल्लाथनगम और अन्य**[1] वाले मामले के निम्नलिखित पैरा में मताभिव्यक्ति की है :-

> "13. **मुंबई इंटरनेशल एयरपोर्ट** [(2010) 7 एस. सी. सी. 417 = ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 3109] वाले मामले इस न्यायालय ने यह मताभिव्यक्ति की –
>
> > 13. पक्षों को संयोजित किए जाने के संबंध में सामान्य नियम यह है कि किसी वाद में वादी वाद का स्वामी होने के नाते उन व्यक्तियों का चुनाव कर सकता है, जिनके विरुद्ध वह मुकदमेबाजी चलाना चाहता है और उसको किसी ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध वाद को चलाने के लिए विवश नहीं किया जा सकता, जिसके विरुद्ध वह कोई अनुतोष नहीं चाहता । इसके परिणामस्वरूप कोई व्यक्ति जो वाद का पक्ष नहीं है, को वादी की इच्छा के विरुद्ध वाद में पक्ष के रूप में संयोजित किए जाने का अधिकार नहीं है । किंतु यह सामान्य नियम

---

[1] (2015) 13 एस. सी. सी. 579 = ए. आई. आर. 2015 एस. सी. 1264.

सिविल प्रक्रिया संहिता (संक्षेप में 'संहिता') के आदेश 1, नियम 10(2) के उपबंधों के अध्यधीन है, जो उचित या आवश्यक पक्षों के संयोजन के लिए उपबंधित करता है । उक्त उपनियम को नीचे उद्धृत किया गया है –

> '10(2) **न्यायालय पक्षकारों का नाम काट सकेगा या जोड़ सकेगा** – न्यायालय कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम में या तो दोनों पक्षकारों में से किसी के आवेदन पर या उसके बिना और ऐसे निबंधनों पर, जो न्यायालय को न्यायसंगत प्रतीत हों, यह आदेश दे सकेगा कि वादी के रूप में या प्रतिवादी के रूप में अनुचित तौर पर संयोजित किसी भी पक्षकार का नाम काट दिया जाए और किसी व्यक्ति का नाम, जिसे वादी या प्रतिवादी के रूप में ऐसे संयोजित किया जाना चाहिए था या न्यायालय के सामने जिसकी उपस्थिति वाद में अंतर्वलित सभी प्रश्नों का प्रभावी तौर पर और पूरी तरह न्यायनिर्णयन और निपटारा करने के लिए न्यायालय को समर्थ बनाने की दृष्टि से आवश्यक हो, जोड़ दिया जाए ।'

14. उक्त उपबंध से यह स्पष्ट हो जाता है कि न्यायालय कार्यवाहियों के किसी भी प्रक्रम पर (विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए फाइल किए गए वाद को सम्मिलित करते हुए) या तो कोई आवेदन फाइल किए जाने पर या उसके बिना और उन शर्तों के आधार पर, जो न्यायालय को उचित प्रतीत हों, इस बाबत निर्देशित कर सकेगा कि निम्नलिखित व्यक्तियों में से किसी भी व्यक्ति को (क) किसी ऐसे व्यक्ति, जिसको वादी या प्रतिवादी के रूप में सम्मिलित किया जाना चाहिए था, किंतु संयोजित नहीं किया गया ; या (ख) कोई व्यक्ति जिसकी न्यायालय के समक्ष उपस्थिति न्यायालय को वाद में अंतर्वलित प्रश्नों का प्रभावी ढंग से और पूर्णतया न्यायनिर्णयन किए जाने और उनका निपटारा किए जाने के लिए आवश्यक है, संयोजित किया जा सकता है । संक्षेप में न्यायालय को किसी भी

पक्ष को जिसको आवश्यक पक्ष या उचित पक्ष पाया जाए, को संयोजित किए जाने का विवेकाधिकार प्रदान किया गया है ।

15. 'आवश्यक पक्ष' वह व्यक्ति होता है, जिसको पक्ष के रूप में सम्मलित किया जाना चाहिए था और जिसकी अनुपस्थिति में न्यायालय द्वारा कोई प्रभावी डिक्री पारित नहीं की जा सकती । यदि किसी 'आवश्यक पक्ष' को संयोजित नहीं किया जाता है, तो वाद स्वमेव ही खारिज किए जाने योग्य हो जाता है । 'उचित पक्ष' वह पक्ष होता है, जो यद्‌यपि आवश्यक पक्ष नहीं होता, किंतु ऐसा व्यक्ति होता है जिसकी उपस्थिति न्यायालय को पूर्णतया प्रभावी ढंग से और पर्याप्त रूप से वाद में विवाद में अंतर्वलित समस्त मामलों का न्यायनिर्णयन करने के समर्थ बना देगी, यद्‌यपि यह आवश्यक नहीं कि वह कोई ऐसा व्यक्ति हो, जिसके पक्ष में या जिसके विरुद्ध डिक्री पारित की जानी हो । यदि किसी व्यक्ति को उचित या आवश्यक पक्ष पाया जाता है, तो न्यायालय को उसको वादी की इच्छा के विरुद्ध संयोजित करने की अधिकारिता प्राप्त होती है । यह तथ्य कि कोई व्यक्ति, जिसके द्‌वारा वादी के विरुद्ध वाद का निर्णय पारित होने के पश्चात् वादग्रस्त संपत्ति में अधिकार/हित सुनिश्चित होने की संभावना है, उस व्यक्ति को विनिर्दिष्ट अनुपालन के लिए फाइल किए गए वाद का आवश्यक पक्ष या उचित पक्ष नहीं बनाएगा ।"

7. माननीय उच्चतम न्यायालय ने **कर्नाटक दास और अन्य** बनाम **नाबाकुमार दास और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया :-

"11.1 प्रथमतः, वादी (मकान मालिक) द्‌वारा राज्य किराया कानून के अधीन प्रतिवादी (किराएदार) के विरुद्ध फाइल किए गए निष्कासन वाद में केवल मकान मालिक और किराएदार आवश्यक पक्ष होते हैं । अन्य शब्दों में किसी किराएदारी के वाद में विनिश्चय के प्रयोजनार्थ केवल दो व्यक्ति आवश्यक पक्ष होते हैं अर्थात् मकान मालिक और किराएदार ।

[1] (2018) 2 एस. सी. सी. 352 = ए. आई. आर. 2018 एस. सी. 682.

11.2 द्वितीयत:, ऐसे किसी वाद में मकान मालिक (वादी) से यह अभिवाक् किया जाना और केवल दो बातों को साबित किया जाना अपेक्षित होता है, जिनके आधार पर वह किराए पर दिए गए वादग्रस्त मकान से उसके किराएदार के विरुद्ध बेदखली की डिक्री का दावा करने के लिए समर्थ होता है । प्रथमत:, वादी और प्रतिवादी के मध्य मकान मालिक और किराएदार का संबंध विद्यमान होना चाहिए और द्वितीयत:, वे आधार, जिन पर वादी/ मकान मालिक ने किराया कानून के अंतर्गत प्रतिवादी किराएदार के निष्कासन की ईप्सा की है, विद्यमान है । जब यह दो बातें साबित हो जाती हैं, तो निष्कासन वाद सफल हो जाता है ।

11.3 तृतीयत:, वादग्रस्त मकान के स्वत्व का प्रश्न निष्कासन वाद के विनिश्चय के लिए सुसंगत नहीं है । इसका कारण यह है कि यदि मकान मालिक वादग्रस्त मकान के संबंध में अपने स्वत्व को साबित कर पाने में विफल रहता है, किंतु वादग्रस्त संपत्ति के संबंध में मकान मालिक और किराएदार के संबंध की विद्यमान्यता को साबित कर देता है और किसी ऐसे आधार की विद्यमानता को भी साबित कर देता है, जिस पर किराएदारी अधिनियम के अंतर्गत निष्कासन ईप्सित है, तो निष्कासन वाद सफल हो जाता है । निश्चित रूप से, यदि मकान मालिक वादग्रस्त मकान के संबंध में अपने स्वत्व को साबित कर देता है, किंतु वादग्रस्त मकान के संबंध में मकान मालिक और किराएदार के संबंध की विद्यमानता को साबित कर पाने में विफल हो जाता है, तो निष्कासन वाद असफल हो जाता है । [देखें **रणवीर सिंह** बनाम **असरफी लाल** वाला मामला (1995) 6 एस. सी. सी. 580 = ए. आई. आर. ऑनलाइन 1995 एस. सी. 808.]

11.4 चतुर्थत:, वादी को उसके वाद का स्वामी होने के नाते किसी तृतीय पक्ष को वाद में पक्ष बनाने के लिए विवश नहीं किया जा सकता, चाहे उस तृतीय पक्ष को उसकी इच्छा के विरुद्ध वादी बनाया जाना हो या प्रतिवादी, जब तक कि वह तृतीय व्यक्ति इस बात को साबित नहीं कर देता कि वह वाद में आवश्यक पक्ष है

और बिना उसकी उपस्थिति के वाद आगे नहीं बढ़ सकता और प्रभावी ढ़ंग से निर्णीत नहीं किया जा सकता । अन्य शब्दों में कोई भी व्यक्ति वादी को किसी तृतीय व्यक्ति को वाद में सह-वादी या प्रतिवादी बनाने के लिए विवश नहीं कर सकता । इसके अतिरिक्त जब वह तृतीय व्यक्ति यह दर्शित कर पाने में असफल हो जाता है कि वह किस प्रकार से वाद में आवश्यक पक्ष या उचित पक्ष है और उसकी उपस्थिति के बिना किस प्रकार से वाद न तो आगे बढ़ सकता है और न ही निर्णीत हो सकता है या उसकी उपस्थिति किस प्रकार से वाद के प्रभावी निर्णय के लिए आवश्यक है । **[देखें रुमा चक्रवर्ती** बनाम **सुधा रानी बनर्जी** (2005) 8 एस. सी. सी. 140 = ए. आई. आर. 2005 एस. सी. 3557]

11.5 पंचमतः, वाद का आवश्यक पक्ष वह व्यक्ति होता है, जिसके बिना कोई भी आदेश प्रभावी ढ़ंग से पारित नहीं किया जा सकता । उचित पक्ष वह व्यक्ति होता है, जिसकी अनुपस्थिति में कोई प्रभावी आदेश पारित किया जा सकता है किंतु जिसकी उपस्थिति वाद की कार्यवाही में अंतर्वलित प्रश्न के पूर्ण और अंतिम विनिश्चय के लिए आवश्यक है । **[देखें उदित नारायण सिंह मालपाहारिया** बनाम **राजस्व बोर्ड,** ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 786]

11.6 षष्ठंमतः, यदि किसी वादग्रस्त संपत्ति के सह-स्वामी या सह मकान मालिक विद्यमान हैं, तो कोई भी सह-स्वामी या सह-मकान मालिक किराएदार के विरुद्ध निष्कासन के लिए वाद फाइल कर सकता है । अन्य शब्दों यह आवश्यक नहीं है कि समस्त स्वामी/मकान मालिक किराएदार के विरुद्ध फाइल किए जा रहे निष्कासन वाद में पक्ष के रूप में संयोजित किए जाएं । [देखें **कस्तूरी राधाकृष्णन** बनाम **एम. चिन्निया,** [(2016) 3 एस. सी. सी. 296 = ए. आई. आर. 2016 एस. सी. 609]"

8. वर्तमान मामले में प्रत्यर्थी/प्रतिवादी का उसके द्वारा फाइल किए गए लिखित कथन में स्वीकृत रूप से पक्षकथन यह है कि उसको वादग्रस्त संपत्ति के कब्जे में अनिल कुमार पाण्डेय, जो वादग्रस्त संपत्ति के

स्वामी थे, द्वारा स्वीकृत किया गया था । पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने प्रत्यर्थी/प्रतिवादी के विरुद्ध आज्ञापक और स्थायी व्यादेश की डिक्री के लिए वाद फाइल किया है और प्रतिवादी को इस बाबत निर्देशित किए जाने की ईप्सा की है कि वह वादग्रस्त संपत्ति का शांतिपूर्वक कब्जा उसको हस्तगत कर दे और इस संपत्ति के संबंध में किसी तृतीय पक्ष का हित सृजित न करे और साथ ही वादकालीन लाभ के अनुतोष की भी ईप्सा की है । श्री अनिल कुमार पाण्डेय की मृत्यु हो चुकी है और श्री हिमाद्री पाण्डेय श्री अनिल कुमार पाण्डेय के एकमात्र उत्तरजीवी विधिक उत्तराधिकारी हैं । पुनरीक्षणकर्ता/वादी ने श्री हिमाद्री पाण्डेय को वाद में सह-प्रतिवादी के रूप में पक्ष बनाए जाने की ईप्सा की है । पूर्वोक्त निर्णयों में अधिकथित विनिश्चयानुपात के अनुसार वाद का वादी, जो वाद का स्वामी होता है, उस व्यक्ति को चुनने का अधिकार रखता है, जिसके विरुद्ध वह मुकदमा चलाना चाहता है । अत: मेरी सुविचारित राय में हिमाद्री पाण्डेय वाद का उचित पक्ष हैं, जिनकी उपस्थिति वाद की कार्यवाही में अंतर्वलित प्रश्नों के संपूर्ण और अंतिम विनिश्चय के लिए आवश्यक है । विचारण न्यायालय ने इस स्थिति को ध्यान में रखते हुए पुनरीक्षणकर्ता/वादी द्वारा प्रस्तुत किए गए प्रयोजनार्थ पक्ष संयोजित किए जाने के आवेदन को खारिज करके अवैधता कारित की ।

9. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान सिविल पुनरीक्षण मंजूर किया जाता है । तारीख 6 फरवरी, 2019 का आक्षेपित आदेश एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है । पुनरीक्षणकर्ता/वादी द्वारा पक्ष संयोजित किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल किया गया आवेदन मंजूर किया जाता है । पुनरीक्षणकर्ता/वादी को हिंमाद्री पांडेय को प्रतिवादी संख्या 2 के रूप में वाद में संयोजित किए जाने की अनुज्ञा प्रदान की जाती है ।

10. लागत के बाबत कोई आदेश पारित नहीं किया जाता ।

याचिका मंजूर की गई ।

शु.

सविथरम्मा

बनाम

नागरत्ना और अन्य

(2019 की रिट याचिका संख्या 50708)

तारीख 3 जुलाई, 2020

न्यायमूर्ति ज्योति मूलिमणी

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 (1908 का 5) – आदेश 18, नियम 17 – न्यायालय द्वारा साक्षी को परीक्षा के प्रयोजनार्थ पुन: बुलाया जाना – वादी द्वारा विभाजन और पृथक् कब्जे के दावे में साक्ष्य बंद किए जाने वाले आदेश को वापस लिए जाने और उसके साक्षी को पुन: मुख्य परीक्षा का अवसर प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रार्थनापत्र प्रस्तुत किया जाना – वादी द्वारा ये प्रार्थनापत्र विचारण के अंतिम प्रक्रम पर, जब वाद बहस के लिए निर्धारित किया जा चुका था, प्रस्तुत किया जाना – आवेदन में किसी संतोषजनक और तर्कपूर्ण कारण का उल्लेख न किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा आवेदन को अस्वीकार किया जाना उचित है ।

संक्षेप में मामले के तथ्य यह है कि वादी श्रीमती सविथरम्मा द्वारा वर्ष 2008 में वाद संस्थित कराया गया, जिसके तथ्य यह है कि वादी और प्रतिवादी अविभाजित संयुक्त हिंदू परिवार के सदस्य हैं । वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची में उल्लिखित संपत्ति वादी और प्रतिवादी संख्या 1 से 9 की पैतृक संपत्ति है और संयुक्त परिवार की संपत्ति है । वादी ने संपत्ति को विभाजित करके उसका 1/3 भाग उसको दिए जाने की मांग की, किंतु प्रतिवादी संख्या 1 से 8 विभाजन करने और वादी को माप और सीमांकन करके उसका 1/3 भाग प्रदान करने में विफल रहे । इसलिए, वादी वाद फाइल करने के लिए मजबूर हो गई और उसने विधिसम्मत रूप से अपने 1/3 भाग के विभाजन और पृथक् कब्जे की

ईप्सा करते हुए विभाजन का वाद फाइल किया । वादी ने प्रतिवादी संख्या 1 से 8, उनके अभिकर्ताओं, प्रतिनिधियों या किसी भी अन्य को वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची में उल्लिखित संपत्ति को अन्यसंक्रामित किए जाने, उस पर कोई भार या प्रभार सृजित किए जाने से उनको या उनके अधीन दावा करने से निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ स्थायी व्यादेश की भी ईप्सा की । प्रतिवादियों द्वारा वाद का गंभीरतापूर्वक प्रतिवाद किया गया । प्रत्यर्थी संख्या 7 ने तारीख 6 मार्च, 2009 को वादपत्र में किए गए अभिकथनों से इनकार करते हुए लिखित कथन फाइल किया । वाद की कार्यवाहियों के लंबन के दौरान मूल वादी श्रीमती सविथरम्मा की तारीख 4 मार्च, 2011 को मृत्यु हो गई । तत्पश्चात् याची ने मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा के विधिक प्रतिनिधि की हैसियत से वाद के अभिलेख में अपना नाम सम्मिलित किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन फाइल किया । उक्त आवेदन का प्रतिवादी संख्या 7 द्वारा गंभीरतापूर्वक इस आधार पर प्रतिवाद किया गया कि श्री आर. एम. सुदर्शन मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा का न तो नैसर्गिक पुत्र है और न ही अंगीकृत पुत्र । तथापि, विचारण न्यायालय ने उक्त आवेदन को मंजूर कर लिया और याची का नाम मृतक वादी के विधिक प्रतिनिधि की हैसियत में वाद के अभिलेख में सम्मिलित किए जाने की अनुज्ञा इस बाबत सबूत के अध्यधीन रहते हुए प्रदान कर दी कि वह मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा का पुत्र है । इस मामले में तारीख 5 मार्च, 2019 और तत्पश्चात् तारीख 14 मार्च, 2019 अंतिम बहस के लिए निर्धारित की गई । तारीख 14 मार्च, 2019 को वादी ने दो आवेदन प्रस्तुत किए, अर्थात् (i) वादी साक्षी 1 के साक्ष्य को बंद किए जाने के बाबत पारित आदेश वापस लिए जाने और वादी साक्षी 1 को मुख्य परीक्षा में आगे परीक्षण के लिए उपस्थित होने की अनुज्ञा प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 38, नियम 17 सपठित धारा 151 के अधीन अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 18 और (ii) दस्तावेज प्रस्तुत किए जाने के प्रयोजनार्थ सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 14 (क) सपठित धारा 151 के अधीन अंतर्वर्ती आवेदन संख्या

19 । विचारण न्यायालय ने दोनों आवेदनों को तारीख 21 सितंबर, 2019 को अस्वीकृत कर दिया । इसलिए याची ने इस न्यायालय की शरण ली । याचिका खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अब हमको परस्पर विरोधी दलीलों पर विचार करना होगा । हम अवेक्षित करते हैं कि प्रार्थनापत्र सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 14(क) के अधीन फाइल किया गया है । किंतु ऐसा कोई उपखंड सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 में समाविष्ट नहीं है । इसके विपरीत संहिता के आदेश 7 का नियम 14 उन दस्तावेजों को प्रस्तुत किए जाने के लिए उपबंधित करता है, जिनके आधार पर वादी ने वाद फाइल किया है । चाहे कुछ भी हो, विचारण न्यायालय ने परस्पर विरोधी दलीलों पर विचार किया और न्यायत: यह निष्कर्ष निकाला कि ऐसे किसी भी संतोषजनक और तर्कपूर्ण कारण का उल्लेख आवेदन के समर्थन में प्रस्तुत नहीं किया गया, जिसके आधार पर वादी को दस्तावेज प्रस्तुत करने की अनुज्ञा प्रदान की जा सके । पुन:, वादी ने विचारण के समाप्त होने के बिल्कुल अंतिम प्रक्रम अर्थात् जब मामला बहस के लिए निर्धारित कर दिया गया, पर यह आवेदन फाइल किया है । मेरे विचार में किसी भी स्थिति में परिस्थितियां वादी द्वारा दस्तावेजों को प्रस्तुत किए जाने के प्रयोजनार्थ अनुज्ञा की ईप्सा करने में सद्भाविकता दर्शित नहीं करती । इसलिए विचारण न्यायालय आवेदन को अस्वीकृत करने में न्यायनुमत था । अंतत: मैं यह कहता हूं कि विचारण की तारीख निर्धारित करने या स्थगन प्रदान करने से इनकार करने का किसी न्यायाधीश का आदेश पूर्णत: वैवेकिक शक्ति का विशिष्ट प्रयोग है और ऐसे आदेशों में उच्च न्यायालय द्वारा केवल अपवादिक मामलों में ही मध्यक्षेप किया जाना चाहिए । मेरे विचार में विचारण न्यायालय ने अपनी शक्ति का प्रयोग सही परिप्रेक्ष्य में किया । वास्तव में विचारण न्यायालय ने सभी तात्विक तथ्यों पर विचार किया है और आवेदनों को अस्वीकृत किया । मैं अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 18 और 19 पर विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश में मध्यक्षेप करने और संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन पर्यवेक्षणीय शक्ति का प्रयोग करने का कोई कारण नहीं पाता । (पैरा 35, 36, 37, 38 और 39)

आरंभिक रिट अधिकारिता : 2019 की रिट याचिका संख्या 50708.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 226 के अधीन रिट याचिका ।

याची की ओर से श्री प्रकाश एम. पाटिल

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री वाई. वी. पार्थसारथी

आदेश

याची ने वर्तमान रिट याचिका बैंग्लूरु के अड़तीसवें अपर नगर सिविल न्यायाधीश और वरिष्ठ खंड द्वारा 2008 के मूल वाद संख्या 7109 में अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 18 और 19 पर तारीख 21 सितंबर, 2019 को पारित आदेश को चुनौती देते हुए इस न्यायालय की रिट अधिकारिता का अवलंब लेते हुए फाइल की है । उक्त आदेश की एक प्रति रिट याचिका के साथ संलग्नक (एफ.) के रूप में संलग्न है, जिसके द्वारा वादी द्वारा वादी साक्षी 1 के साक्ष्य को बंद करने वाले आदेश को वापस लिए जाने और वादी को आगे परीक्षण के लिए मुख्य परीक्षा की अनुमति प्रदान किए जाने और दस्तावेज प्रस्तुत किए जाने के लिए प्रस्तुत किए गए आवेदनों को विचारण न्यायालय द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया ।

2. वाद आरंभिकत: वर्ष 2008 में श्रीमती सविथरम्मा द्वारा संस्थित कराया गया था । वाद के तथ्य इस प्रकार हैं :-

> "वादी का पक्षकथन यह है कि वह और प्रतिवादी अविभाजित हिंदू संयुक्त परिवार के सदस्य हैं । वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची में उल्लिखित संपत्ति वादी और प्रतिवादी संख्या 1 से 9 की पैतृक संपत्ति है और संयुक्त परिवार की संपत्ति है ।
>
> जब वादी ने संपत्ति के विभाजन की मांग की, तो प्रतिवादी संख्या 1 से 8 विभाजन करने और वादी को माप और सीमांकन करके उसका 1/3 भाग प्रदान करने में विफल रहे । इसलिए, वह वाद फाइल करने के लिए मजबूर हो गई और उसने वाद में अपने विधिसम्मत 1/3 भाग के विभाजन और पृथक् कब्जे की ईप्सा की, जो वादपत्र की अनुसूची में उल्लिखित संपत्ति है ।

वादी ने प्रतिवादी संख्या 1 से 8, उनके अभिकर्ताओं, प्रतिनिधियों या किसी भी अन्य को वाद साथ संलग्न अनुसूची में उल्लिखित संपत्ति को अन्य संक्रामित किए जाने, उस पर कोई भार या उस पर कोई प्रभार सृजित किए जाने से उनको या उनके अधीन दावा करने से निषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ स्थायी व्यादेश की भी ईप्सा की ।

वाद का गंभीरतापूर्वक प्रतिवाद किया गया । प्रत्यर्थी संख्या 7 ने तारीख 6 मार्च, 2009 को वादपत्र में किए गए अभिकथनों से इनकार करते हुए लिखित कथन फाइल किया ।

वाद की कार्यवाहियों के लंबन के दौरान मूल वादी श्रीमती सविथरम्मा की तारीख 4 मार्च, 2011 को मृत्यु हो गई । तत्पश्चात् याची ने मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा के विधिक प्रतिनिधि की हैसियत से अभिलेख पर अपना नाम सम्मिलित किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन फाइल किया । उक्त आवेदन का प्रतिवादी संख्या 7 द्वारा गंभीरतापूर्वक इस आधार पर प्रतिवाद किया गया कि श्री आर. एम. सुदर्शन मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा का न तो नैसर्गिक पुत्र है और न ही अंगीकृत पुत्र ।

तथापि, विचारण न्यायालय ने उक्त आवेदन को मंजूर कर लिया और याची का नाम मृतक वादी के विधिक प्रतिनिधि की हैसियत में अभिलेख पर लिए जाने की अनुज्ञा इस बाबत सबूत के अध्यधीन रहते हुए प्रदान कर दी कि वह मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा का पुत्र है ।

मामले में तारीख 5 मार्च, 2019 अंतिम बहस के लिए निर्धारित की गई और तत्पश्चात् तारीख 14 मार्च, 2019 निर्धारित की गई । तारीख 14 मार्च, 2019 को वादी ने दो आवेदन प्रस्तुत किए, अर्थात्

(i) वादी साक्षी 1 के साक्ष्य को बंद किए जाने के बाबत पारित आदेश को वापस लिए जाने और वादी साक्षी 1 को मुख्य परीक्षा में आगे परीक्षण के लिए उपस्थित होने की

अनुज्ञा प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 38, नियम 17 सपठित धारा 151 के अधीन अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 18 ; और

(ii) दस्तावेज प्रस्तुत किए जाने के प्रयोजनार्थ सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 14 (क) सपठित धारा 151 के अधीन अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 19 ।

विचारण न्यायालय ने दोनों आवेदनों को तारीख 21 सितंबर, 2019 को अस्वीकृत कर दिया । इसलिए याची ने इस न्यायालय की शरण ली ।"

3. याची/वादी की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री प्रकाश एम. पाटिल उपस्थित हुए । उन्होंने दलील दी कि विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश अवैध, मनमानापूर्ण और अनुचित है और ये आदेश आवेदनों में समनुदेशित कारणों का समुचित मूल्यांकन किए बिना पारित किए गए हैं ।

4. उन्होंने निवेदन किया कि याची द्वारा जिन दस्तावेजों को प्रस्तुत किया जाना ईप्सित है, वे याची के पक्षकथन के समर्थन के प्रयोजनार्थ महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं और इस लिए यह उचित और आवश्यक है कि वादी को विचारण न्यायालय के समक्ष उन दस्तावेजों को प्रस्तुत किए जाने की अनुज्ञा प्रदान की जाए ।

5. विद्वान् काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि वे दस्तावेज, जिनको विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया जाना ईप्सित है, काउंसेल, जो विचारण न्यायालय के समक्ष उपस्थित हो रहे थे, को हस्तगत कर दिए गए थे, किंतु उन्होंने इन दस्तावेजों को विचारण न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया ।

6. विद्वान् काउंसेल द्वारा आगे यह निवेदन किया गया कि याची दस्तावेजों को प्रस्तुत किए जाने के बाबत होने वाले प्रभाव के प्रति जागरुक नहीं था और इसलिए उन्होंने इन दस्तावेजों को पूर्व में प्रस्तुत नहीं किया । किंतु जब उनको दस्तावेजों के महत्व के बारे में जानकारी हुई, तो उन्होंने उन दस्तावेजों को प्रस्तुत करने की ईप्सा की ।

7. इसलिए, दस्तावेजों का प्रस्तुत न किया जाना आशयपूर्वक नहीं था और यह याची द्वारा की गई सद्भाविक त्रुटि थी । इसलिए, विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक दलील दी कि यदि याची को दस्तावेजों को प्रस्तुत करने की अनुज्ञा प्रदान न की गई तो उसको अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पड़ेगा । इसके विपरीत प्रतिवादियों को किसी कठिनाई या अन्याय का सामना नहीं करना पड़ेगा ।

8. अंतत: विद्वान् काउंसेल ने दलील दी कि उपरोक्त दृष्टिकोण से विचार करते हुए विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश विधि की दृष्टि में मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है । तद्नुसार, उन्होंने विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को अभिखंडित किए जाने की प्रार्थना की ।

9. प्रतिवादी/प्रत्यर्थी संख्या 7 की ओर से विद्वान् काउंसेल श्री वाई. वी. पार्थसारथी वीडियो कान्फ्रेंसिंग के माध्यम से उपस्थित हुए उन्होंने दलील दी कि रिट याचिका पूर्णत: भ्रमपूर्ण और न टिकने योग्य है और इसलिए अपास्त किए जाने योग्य है । यह रिट याचिका मात्र वाद कार्यवाहियों से न्यायालय का ध्यान भटकाने के प्रयोजनार्थ फाइल की गई है ।

10. उन्होंने निवेदन किया कि श्रीमती सविथरम्मा, पुत्री स्वर्गीय थिम्मारायप्पा ने विभाजन के लिए वाद फाइल किया था और उन्होंने वादपत्र के साथ संलग्न अनुसूची में उल्लिखित संपत्ति में उसके अभिकथित 1/3 भाग का कब्जा पृथक् कर दिया था । इसके पूर्व कि साक्ष्य आरंभ होती, तारीख 4 मार्च, 2011 को उसकी मृत्यु हो गई । उसके पति की मृत्यु उसकी मृत्यु के पहले ही हो गई थी और वह संतानहीन थी । इसके पहले कि उपशमन का आदेश पारित किया जाता, याची ने मृतक वादी का पुत्र होने का दावा करते हुए उसके विधिक प्रतिनिधि की हैसियत से अभिलेख पर उसका नाम उल्लिखित किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन प्रस्तुत किया ।

11. प्रतिवादी संख्या 7 ने इसका गंभीरतापूर्वक विरोध किया । तथापि, विचारण न्यायालय ने तारीख 17 जनवरी, 2012 को आदेश पारित कर दिया, जिसके द्वारा याची के नाम का उल्लेख इस सबूत के

अध्यधीन रहते हुए अभिलेख पर किए जाने की अनुज्ञा प्रदान कर दी गई कि वह मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा का पुत्र है । उपरोक्त आदेश को दृष्टि में रखते हुए, वादपत्र को संशोधित किया गया और इसके परिणामस्वरूप प्रतिवादी संख्या 7 ने अतिरिक्त लिखित कथन फाइल किया ।

12. उन्होंने आगे निवेदन किया कि वादी ने तारीख 28 जुलाई, 2014 को एक शपथपत्र फाइल किया और दस्तावेजों को चिह्नित किया । मामले को प्रतिपरीक्षा के लिए निर्धारित कर दिया गया । प्रतिवादी संख्या 7 ने मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा के विधिक प्रतिनिधि होने के नाते श्री आर. एम. सुदर्शन के दावे को गंभीरतापूर्वक विवादित किया । अतः, उन्होंने अतिरिक्त विवाद्यक विरचित किए जाने के प्रयोजनार्थ एक आवेदन फाइल किया, जो तारीख 11 नवंबर, 2014 को मंजूर कर लिया गया और एक अतिरिक्त विवाद्यक विरचित किया गया :

> "क्या श्री आर. एम. सुदर्शन ने इस बात को साबित कर दिया है कि वे मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा के विधिक प्रतिनिधि हैं ।"

13. तत्पश्चात्, वादी की प्रतिवादी संख्या 7 द्वारा प्रतिपरीक्षा की गई और वादी का साक्ष्य तारीख 19 जुलाई, 2018 को बंद कर दिया गया । उसने आगे साक्ष्य प्रस्तुत करने का कोई प्रयास नहीं किया । इसलिए, विचारण न्यायालय ने मामले को प्रतिवादियों के साक्ष्य के लिए निर्धारित कर दिया और प्रतिवादी संख्या 7 ने तारीख 6 अगस्त, 2018 को अपना शपथपत्र फाइल किया और चूंकि वादी और उसके काउंसेल अनुपस्थित थे, इसलिए तारीख 12 सितंबर, 2018 के आदेश द्वारा यह निर्णय लिया गया कि वादी को प्रतिवादी साक्षी 1 की प्रतिपरीक्षा नहीं करनी है । तत्पश्चात् मामले को तारीख 28 सितंबर, 2018 को बहस के लिए निर्धारित कर दिया ।

14. वादी ने तारीख 4 दिसंबर, 2012 को प्रतिवादी साक्षी 1 की प्रतिपरीक्षा को बंद करने वाले आदेश को वापस लिए जाने के लिए आवेदन प्रस्तुत किया । विचारण न्यायालय ने उक्त आवेदन को मंजूर कर लिया और वादी ने प्रतिवादी साक्षी 1 की प्रतिपरीक्षा के बजाय समय

की ईप्सा करते हुए अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 16 फाइल कर दिया । वह अंतर्वर्ती आवेदन खारिज कर दिया गया और तत्पश्चात् मामले को तारीख 11 फरवरी, 2019 को बहस के लिए निर्धारित कर दिया गया ।

15. प्रतिवादी संख्या 7 के विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक दलील दी कि इस प्रक्रम पर वादी द्वारा अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 17 प्रतिवादी साक्षी 1 की आगे प्रतिपरीक्षा के प्रयोजनार्थ उसकी प्रतिपरीक्षा को बंद किए जाने वाले आदेश को वापस लिए जाने के लिए फाइल किया गया था, जो मंजूर कर लिया गया । प्रतिवादी साक्षी 1 की तारीख 11 फरवरी, 2019 को भागत: प्रतिपरीक्षा की गई और तत्पश्चात् मामले को तारीख 25 फरवरी, 2019 को प्रतिवादी साक्षी 1 की आगे प्रतिपरीक्षा के लिए स्थगित कर दिया गया । उस दिवस को प्रतिवादी साक्षी 1 का पूर्ण रूप से परीक्षण किया गया ।

16. तत्पश्चात्, मामले को तारीख 5 मार्च, 2019 को और तत्पश्चात् तारीख 14 मार्च, 2019 को बहस के लिए निर्धारित किया गया । इस प्रक्रम पर अर्थात् तारीख 14 मार्च, 2019 को वादी ने उपरोक्त प्रार्थना पत्र प्रस्तुत किए और विचारण न्यायालय द्वारा इन प्रार्थना पत्रों को अस्वीकृत कर दिया गया । इस तथ्य के बावजूद कि इस मामलों को अंतिम सुनवाई के लिए निर्धारित किया गया था, वादी अनुपस्थित रहा । वादी मामले में बहस करने के बजाय स्थगन की ईप्सा करता रहा ।

17. एक अन्य निवेदन किया गया कि विचारण न्यायालय ने तारीख 22 अक्तूबर, 2019 को इस तथ्य को अभिलिखित किया कि वादी को कोई मौखिक बहस नहीं करनी है, किंतु उसको लिखित बहस फाइल करने की अनुज्ञा प्रदान कर दी । प्रतिवादी संख्या 7 ने भी तारीख 31 अक्तूबर, 2019 को अपनी लिखित बहस फाइल कर दी । उसने निवेदन किया कि इसी प्रक्रम पर उपरोक्त रिट याचिका फाइल की गई और अनंतरिम आदेश अभिप्राप्त कर लिया गया ।

18. अंतत: विद्वान् काउंसेल ने दृढ़तापूर्वक दलील दी कि वादी का साक्ष्य तारीख 19 जुलाई, 2018 को ही बंद किया जा चुका था और तत्पश्चात् वादी ने स्वयं तारीख 25 फरवरी, 2019 को प्रतिवादी संख्या

7 की प्रतिपरीक्षा की । दोनों पक्षों की ओर से उपस्थित काउंसेलों ने भी अपनी-अपनी दलीलें प्रस्तुत कर दीं । तत्पश्चात् मामले को निर्णय के लिए निर्धारित कर दिया गया । याची ने वाद में निश्चायक प्रगति के बावजूद यह याचिका कार्यवाहियों में विलंब कारित करने के प्रयोजनार्थ फाइल की है । अत:, उन्होंने रिट याचिका खारिज किए जाने का अनुरोध किया ।

19. मैंने याची के विद्वान् काउंसेल श्री प्रकाश एम. पाटिल और प्रत्यर्थी संख्या 7 के विद्वान् काउंसेल श्री वाई. वी. पार्थसारथी को सुना । प्रत्यर्थी संख्या 1 से 6 और 8 से 14 को तारीख 18 मार्च, 2020 के आदेश द्वारा नोटिस भेजे जाने से छूट प्रदान कर दी गई थी । मैंने कागजातों का परिशीलन किया ।

20. वर्तमान रिट याचिका में अंतर्वलित साधारण प्रश्न मामले को विचारार्थ पुन: खोले जाने और दस्तावेज प्रस्तुत किए जाने से संबंधित है । यहां पर यह सुसंगत होगा कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 18, नियम 17 को निर्दिष्ट किया जाए, जो निम्नलिखित है :-

> "17. **न्यायालय साक्षी को पुन: बुला सकेगा और उसकी परीक्षा कर सकेगा** – न्यायालय वाद के किसी भी प्रक्रम में ऐसे किसी भी साक्षी को पुन: बुला सकेगा, जिसकी परीक्षा की जा चुकी है और (तत्समय प्रवृत्त साक्ष्य की विधि के अधीन रहते हुए) उससे ऐसे प्रश्न पूछ सकेगा जो न्यायालय ठीक समझे ।"

21. यह नियम न्यायालय को किसी साक्षी को किसी भी प्रक्रम पर पुन: बुलाने के लिए सशक्त करता है, जिसकी परीक्षा और प्रतिपरीक्षा हो चुकी है । न्यायालय द्वारा इस शक्ति का प्रयोग स्वप्रेरणा से और किसी पक्ष की पहल पर किया जा सकता है ।

22. हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले में वादी ने अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 18 वादी साक्षी 1 के साक्ष्य को बंद करने वाले आदेश को वापस लिए जाने और उसको मुख्य परीक्षा पुन: कराने की अनुज्ञा प्रदान किए जाने के लिए फाइल की है । उक्त आवेदन के समर्थन में वादी/श्री आर. एम. सुदर्शन ने शपथपत्र फाइल किया है ।

23. इन बातों को ध्यान में रखते मुझे यह देखना होगा कि उक्त आवेदन के समर्थन में कौन-कौन से कारण समनुदेशित किए गए हैं । शपथपत्र में यह अभिलिखित किया गया है कि उसको यह दलील देते हुए मुख्य परीक्षा में आगे साक्ष्य पेश करने की अनुज्ञा प्रदान की जा सकती है कि उसने अपने पूर्ववर्ती अधिवक्ता को वे दस्तावेज हस्तगत कर दिए थे, जिनका उल्लेख अंतर्वर्ती आवेदन फाइल किए जाते समय दस्तावेजों की सूची में किया गया था और उसको उन दस्तावेजों के बारे में प्रतिवादी साक्षी 1 की प्रतिपरीक्षा के समय जानकारी हुई । यह दस्तावेज रजिस्ट्रीकृत वसीयत है, जिसको न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया गया है । यह भी अभिकथित किया गया है कि मूल वादी श्रीमती सविथरम्मा द्वारा निष्पादित वसीयत में इस बात का प्रकीटकरण किया गया है कि वह मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा का विधिक प्रतिनिधि है ।

24. यह प्रकथन भी किया गया कि उसके पक्ष में गुणागुण के आधार पर एक मजबूत मामला बनता है और यदि आवेदन मंजूर नहीं किया गया, तो उसको अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पड़ेगा । दस्तावेजों का प्रस्तुतीकरण न किया जाना सद्भाविक है, आशयपूर्वक नहीं ।

25. किंतु इस सूचना में जो बात विलक्षण है, वह यह है कि सिवाय यह अभिकथित करने के कि उसने अंतर्वर्ती आवेदन फाइल करने के समय सूची में उल्लिखित दस्तावेज पूर्ववर्ती अधिवक्ता को हस्तगत कर दिए थे, जिसकी जानकारी उसको प्रतिवादी साक्षी 1 के प्रतिपरीक्षण के समय हुई, किंतु वादी ने इस बात का उल्लेख नहीं किया है कि मुख्य प्रतिपरीक्षण पुन: किस संबंध में आवश्यक है । पुन:, इस बाबत कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि वे कौन से आवश्यक प्रश्न हैं जो साक्षियों से पहले नहीं पूछे जा सके थे ।

26. जैसाकि प्रत्यर्थी संख्या 7 के विद्वान् काउंसेल द्वारा न्यायत: स्पष्ट किया गया है कि यद्यपि वर्ष 2015 में ही वसीयत को संदर्भित किया गया था, फिर भी वादी ने इस दस्तावेज के प्रस्तुतीकरण के लिए और मुख्य परीक्षण पुन: कराए जाने के लिए कोई कार्रवाई नहीं की । उसने वर्ष 2019 के दौरान इस उद्देश्य के लिए प्रयास किया ।

27. यद्यपि न्यायालय नियम 17 के अधीन स्वप्रेरणा से या किसी पक्ष की पहल पर कार्रवाई कर सकता है, फिर भी इस शक्ति का प्रयोग किया जाना विलक्षण परिस्थितियों में ही और संदिग्धताओं के स्पष्टीकरण के प्रयोजनार्थ आशयित है और न कि किसी पक्ष के पक्षकथन में किसी कमी को पूरा किए जाने के लिए ।

28. हमारे समक्ष प्रस्तुत मामले में वादी ने विचारण के बिल्कुल अंतिम प्रक्रम पर यह आवेदन फाइल किया है अर्थात् जब मामला बहस के लिए निर्धारित किया जा चुका था ।

29. यह भी स्पष्ट है कि यह शक्ति शुद्धत: वैवेकिक है । इस शक्ति का प्रयोग अत्यधिक सावधानी के साथ और अत्यधिक विलक्षण परिस्थितियों में किया जाना चाहिए । इस शक्ति का प्रयोग विलक्षण परिस्थितियों में और संदिग्धताओं के स्पष्टीकरण के लिए किया जाना आशयित है और न कि किसी पक्ष के पक्षकथन में कमी को पूर्ण किए जाने के लिए । इसलिए, विचारण न्यायालय यह अभिनिर्धारित करते हुए न्यायसंगत था कि उक्त आवेदन के समर्थन में कोई युक्तियुक्त कारण नहीं थे इसका अर्थ यह हुआ कि जैसाकि मैंने स्पष्ट किया है, इस मामले में विचारण न्यायालय के आदेश में मध्यक्षेप करने का कोई कारण नहीं है, जहां तक अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 18 के अस्वीकृत किए जाने का प्रश्न है ।

30. सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 14(क) सपठित धारा 151 के अधीन एक अन्य अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 19 फाइल की गई थी, जिसके द्वारा वादी को दस्तावेज प्रस्तुत करने की अनुज्ञा प्रदान की गई थी । इस आवेदन के समर्थन में भी वादी ने एक शपथपत्र फाइल किया था, जिसमें उन्हीं आधारों का आश्रय लिया गया था, जिनका अश्तय अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 18 में लिया गया था ।

31. याची के विद्वान् काउंसेल ने मामले में बहस करते हुए दलील दी कि याची/वादी के अनुसार मूल वादी श्रीमती सविथरम्मा ने तारीख 18 फरवरी, 2011 को एक वसीयत निष्पादित की थी और तत्पश्चात् तारीख 4 मार्च, 2011 को उसकी मृत्यु हो गई थी । तत्पश्चात् उसको

मृतक वादी श्रीमती सविथरम्मा के विधिक प्रतिनिधि की हैसियत में अभिलेख पर लिया गया । इसलिए, वादी ने वसीयत प्रस्तुत करने की अनुज्ञा की ईप्सा की, जिसको अभिकथित रूप से मूल वादी श्रीमती सविथरम्मा द्वारा अभिकथित किया गया था ।

32. आवेदन के समर्थन में जिन आधारों का अवलंब लिया गया, वे ये हैं कि उसने पूर्ववर्ती काउंसेल को दस्तावेज प्रदान किए थे, जिनको विधिक प्रतिनिधि आवेदन फाइल किए जाते समय उक्त आवेदन के साथ संलग्न सूची में उल्लिखित किया गया था और उसको प्रतिवादी साक्षी 1 की प्रतिपरीक्षा के समय इस तथ्य की जानकारी हुई थी ।

33. उन्होंने दलील दी कि जिन दस्तावेजों को प्रस्तुत किया जाना ईप्सित है, वे महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं, इसलिए उन्होंने न्यायालय से प्रार्थना की कि इन दस्तावेजों को प्रस्तुत करने की अनुज्ञा प्रदान की जाए ।

34. किंतु प्रत्यर्थी संख्या 7 के विद्वान् काउंसेल ने विनिर्दिष्ट रूप से दलील दी कि तारीख 9 जुलाई, 2015 को अभिलिखित वादी साक्षी 1 की प्रतिपरीक्षा के प्रश्न 9 पर वसीयत का संदर्भ है । किंतु आवेदन 44 माह व्यतीत हो जाने के पश्चात् प्रस्तुत किया गया है । उन्होंने यह दलील भी दी कि विचारण न्यायालय ने वादी द्वारा उसकी प्रतिपरीक्षा में की गई स्वीकारोक्तियों पर विचार किया है ।

35. अब हमको परस्पर विरोधी दलीलों पर विचार करना होगा । हम उल्लेख करते हैं कि प्रार्थनापत्र सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7, नियम 14(क) के अधीन फाइल किया गया है । किंतु ऐसा कोई उपखंड सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 7 में समाविष्ट नहीं है । इसके विपरीत संहिता के आदेश 7 का नियम 14 उन दस्तावेजों को प्रस्तुत किए जाने के लिए उपबंधित करता है, जिनके आधार पर वादी ने वाद फाइल किया है ।

36. चाहे कुछ भी हो, विचारण न्यायालय ने परस्पर विरोधी दलीलों पर विचार किया और न्यायत: यह निष्कर्ष निकाला कि ऐसे किसी भी संतोषजनक और तर्कपूर्ण कारण का उल्लेख आवेदन के समर्थन में

प्रस्तुत नहीं किया गया, जिसके आधार पर वादी को दस्तावेज प्रस्तुत करने की अनुज्ञा प्रदान की जा सके ।

37. पुनः, वादी ने विचारण के समाप्त होने के बिल्कुल अंतिम प्रक्रम अर्थात् जब मामला बहस के लिए निर्धारित कर दिया गया, पर यह आवेदन फाइल किया है । मेरे विचार में किसी भी स्थिति में परिस्थितियां वादी द्वारा दस्तावेजों को प्रस्तुत किए जाने के प्रयोजनार्थ अनुज्ञा की ईप्सा करने में सद्भाविकता दर्शित नहीं करती । इसलिए विचारण न्यायालय आवेदन को अस्वीकृत करने में न्यायानुमत था ।

38. अंततः मैं यह कहता हूं कि विचारण की तारीख निर्धारित करने या स्थगन प्रदान करने से इनकार करने का किसी न्यायाधीश का आदेश पूर्णतः वैवेकिक शक्ति का विशिष्ट प्रयोग है और ऐसे आदेशों में उच्च न्यायालय द्वारा केवल आपवादिक मामलों में ही मध्यक्षेप किया जाना चाहिए । मेरे विचार में विचारण न्यायालय ने अपनी शक्ति का प्रयोग सही परिप्रेक्ष्य में किया है ।

39. वास्तव में विचारण न्यायालय ने सभी तात्विक तथ्यों पर विचार किया है और आवेदनों को अस्वीकृत किया है । मैं अंतर्वर्ती आवेदन संख्या 18 और 19 पर विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश में मध्यक्षेप करने और संविधान के अनुच्छेद 227 के अधीन पर्यवेक्षणीय शक्ति का प्रयोग करने का कोई कारण नहीं पाता ।

40. तदनुसार, रिट याचिका खारिज की जाती है । याचिका खारिज किए जाने को दृष्टि में रखते सभी लंबित अंतर्वर्ती आवेदन भी निस्तारित किए जाते हैं ।

याचिका खारिज की गई ।

शु.

गैमन इंडिया लिमिटेड और एक अन्य

बनाम

भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण

(2011 की मूल प्रकीर्ण रिट याचिका संख्या 680)

तारीख 23 जून, 2020

न्यायमूर्ति प्रतिभा एम. सिंह

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 (1996 का 26) – धारा 9 – न्यायालय द्वारा अंतरिम अनुतोष प्रदान किया जाना – कोई पक्षकार माध्यस्थम् कार्यवाहियों के पूर्व या उसके दौरान या माध्यस्थम् पंचाट पारित किए जाने के पश्चात् किसी भी समय, किंतु माध्यस्थम् पंचाट के प्रवृत्त किए जाने के पूर्व अंतरिम अनुतोष प्राप्त करने के लिए न्यायालय की शरण ले सकता है ।

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 – धारा 9 – न्यायालय द्वारा अंतरिम अनुतोष प्रदान किया जाना – पक्षों द्वारा अनेक माध्यस्थम् कार्यवाहियां फाइल किया जाना – पक्षों से यह अपेक्षित होता है कि वे माध्यस्थम् कार्यवाहियों का अवलंब सद्भाविक रूप से लें – कार्यवाहियों की गुणज़ता और असंगत/परस्पर विरोधी पंचाट कार्यवाहियों से बचने के प्रयोजनार्थ यह आवश्यक है कि किसी भी पक्ष द्वारा धारा 9 के अधीन फाइल की गई याचिका में इस बात का उल्लेख अवश्य किया जाना चाहिए कि समान वाद कारण के आधार पर कोई अन्य याचिका फाइल नहीं की गई है ।

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 – धारा 34 – माध्यस्थम् पंचाट अपास्त किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन फाइल किया जाना – पंचाट अपास्त किए जाने के प्रयोजनार्थ फाइल की गई याचिका की सुनवाई करते हुए न्यायालय के लिए यह अभिनिर्धारित करना असंगत होगा कि किसी पश्चात्वर्ती पंचाट में निकाले गए निष्कर्ष के

आधार पर पूर्ववर्ती पंचाट विधिविरुद्ध हो गया है – पंचाट का परीक्षण उस तारीख को आधार मानते हुए किया जाना चाहिए, जब उसको मामले के गुणागुण के आधार पर उद्घोषित किया गया, न कि किसी पश्चात्वर्ती माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित पश्चात्वर्ती निष्कर्षों के आधार पर ।

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 – धारा 34 – माध्यस्थम् पंचाट अपास्त किए जाने के प्रयोजनार्थ आवेदन – याची ठेकेदार और प्रत्यर्थी प्राधिकरण के मध्य विलंब के कारण नुकसान, दरों में बढ़ोतरी और पुनरीक्षण के बाबत विवाद – ठेकेदार द्वारा यह अभिवाक् किया जाना कि विलंब के कारण नुकसान और दरों में बढ़ोतरी और पुनरीक्षण के बाबत प्रस्तुत किए गए दावे सुभिन्न प्रकृति के दावे होते हैं, जिनका न्यायनिर्णयन अलग अलग फाइल किए गए दावों में किया जा सकता है ।

मुकदमेबाजी की समस्याओं के लिए माध्यस्थम् को सर्वरोग-हरण वाला रामबाण साबित होना चाहिए था । किंतु माध्यस्थम् 'वैकल्पिक विवाद समाधान' तंत्र के रूप में अनेक कारणोंवश, एक जटिल मार्ग बन गया, जैसेकि मामले के समाधान में विलंब, पंचाट के प्रवर्तन में चुनौतियां, अत्यधिक लागत इत्यादि । एक अन्य कारण, जो माध्यस्थम् प्रक्रिया को जटिल बना रहा है, 'मामलों की गुणजता' है, जैसेकि समान पक्षों के मध्य समान संविदा के संबंध में या समान संविदाओं की श्रृंखला के संबंध में माध्यस्थम् का बारंबार अवलंब लिया जाना, माध्यस्थम् के लिए बारंबार निदेश किया जाना, माध्यस्थम् अधिकरणों का बारंबार गठन किया जाना, बारंबार पंचाट पारित किया जाना और अन्य चुनौतियां । न्यायालयों द्वारा निर्णय पारित किए जाने और विधि में संशोधन किए जाने के द्वारा इस प्रणाली को प्रभावी बनाए जाने के प्रयोजनार्थ बारंबार कदम उठाए गए, किंतु अभी और भी बहुत कुछ किया जाना शेष है । वर्तमान मामले में गैमन-एटलांटा जे. वी., जो गैमन इंडिया लिमिटेड और एटलांटा लिमिटेड और भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण का एक संयुक्त उपक्रम है, के मध्य उड़ीसा राज्य के राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 5 पर 387.700 किमी. से 414.000 किमी. तक (खुर्दा से भुवनेश्वर)

संविदा आदेश 1 पर चार लेन के राजमार्ग को छह लेन के राजमार्ग के रूप में चौड़ीकरण किए जाने और विद्यमान 2 लेन के परिवहन मार्ग को मजबूती प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ तारीख 23 दिसंबर, 2000 को एक करार निष्पादित किया गया था । इस कार्य का मूल्य लगभग 18.9 करोड़ रुपए था । संविदा के प्रारंभ की तारीख 15 जनवरी, 2001 निर्धारित की गई थी और इस परियोजना को 36 माह के भीतर अर्थात् तारीख 4 जनवरी, 2004 तक निष्पादित किया जाना था । यह परियोजना विहित समय के भीतर निष्पादित नहीं की जा सकी । परियोजना को पूर्ण किए जाने के प्रयोजनार्थ तारीख 31 दिसंबर, 2006 तक समय विस्तार प्रदान किए गए । वाहनों के यातायात की अनुज्ञा मार्च, 2007 में मुख्य परिवहन मार्ग पर चालू रखे जाने के प्रयोजनार्थ प्रदान की गई थी और इसके परिणामस्वरूप ठेकेदार द्वारा यह उपधारणा की गई कि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ने परिवहन मार्ग का कब्जा ले लिया है और इसलिए कार्यपूर्ण हो गया है । परियोजना के निष्पादन के अनुक्रम के दौरान पक्षों के मध्य कुछ दावों के संबंध में विवाद उद्भूत हुए । इन विवादों को ठेकेदार और भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण, दोनों के द्वारा उठाया गया । तारीख 1 अगस्त, 2004 को विवाद पुनर्विलोकन बोर्ड का विशिष्ट आवेदन की शर्तों के उपखंड 67.1 के निबंधनों के अनुसार गठन किया गया । यह अभिकथित किया गया कि विवाद पुनर्विलोकन बोर्ड ने गठन की पूर्ववर्ती अवधि से संबंधित विवाद्यकों का समाधान करने में अपनी असमर्थता के बाबत अभिव्यक्त रूप से संसूचित किया था । अत:, विवाद पुनर्विलोकन बोर्ड ने विवाद्यकों का समाधान नहीं किया और तद्नुसार ठेकेदार ने तारीख 27 जनवरी, 2005 की सूचना द्वारा विशिष्ट आवेदन की शर्तों के उपखंड 67.3 के अधीन माध्यस्थम् का अवलंब लेते हुए अनेक माध्यस्थम् याचिकाएं फाइल कीं, जिनके निस्तारण के लिए अनेक माध्यस्थम् अधिकरण गठित हो गए । इन माध्यस्थम् याचिकाओं के लंबन के दौरान अंतरिम अनुतोष के प्रयोजनार्थ माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन प्रकीर्ण याचिका फाइल की गई । याचिका का निस्तारण करते हुए,

अभिनिर्धारित – ठेकेदार की तरफ से इस प्रतिपादना के समर्थन में विभिन्न विनिश्चय उद्धृत किए गए हैं कि विलंब के कारण नुकसानों के लिए दावे और दरों में बढ़ोतरी/पुनरीक्षण के लिए दावे एक दूसरे से भिन्न हैं । दोनों ही प्रकार के दावों का न्यायनिर्णयन पृथक्-पृथक् रूप से किया जा सकता है और अनुतोष प्रदान किए जा सकते हैं । नुकसानों के लिए अनुतोष प्रदान किए जाने के कारण बढ़ोतरी के लिए फाइल किया गया दावा विफल नहीं होता । यह प्रतिपादना संदेह के घेरे में नहीं है । तथापि, वर्तमान मामले में संविदा के अनुसार दरों में बढ़ोतरी/पुनरीक्षण पहले ही प्रदान की जा चुकी है और ठेकेदार को पंचाट संख्या 1 और पंचाट संख्या 3, दोनों में विलंब के लिए प्रतिकर प्रदान किया जा चुका है । दावा संख्या 1 (प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष दावा संख्या 2.3) को निम्नलिखित दो आधारों पर न्यायत: अस्वीकृत किया गया है – (i) यह दावा आरंभिक निदेश में सम्मिलित नहीं किया गया था, यद्यपि विवाद पहले ही आरंभ हो चुका था, (ii) कार्यस्थल की स्पष्ट रूप से उपलब्धता के पश्चात् कारित विलंब ठेकेदार द्वारा किया गया था, और (iii) खंड 70.2 में अनुज्ञेय बढ़ोतरी के परे कोई अन्य बढ़ोतरी प्रदान नहीं की जा सकती । बढ़ोतरी, जैसीकि संविदा में उपबंधित है, पहले ही प्रदान की जा चुकी है । यह तर्क त्रुटिपूर्ण नहीं है और इसमें मध्यक्षेप किए जाने की आवश्यकता नहीं है । 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 34 के अधीन फाइल की गई याचिका पर सुनवाई करते हुए यह अभिनिर्धारित किया जाना असंगत होगा कि किसी पश्चात्वर्ती पंचाट में निकाला गया निष्कर्ष पूर्ववर्ती पंचाट में निकाले गए निष्कर्ष को अवैध या विधि के विपरीत कर देगा । पंचाट का परीक्षण उस तारीख को दृष्टि में रखते हुए किया जाना चाहिए, जब उसको उसके गुणागुण के आधार पर पारित किया गया और न कि पश्चात्वर्ती निष्कर्षों के आधार पर, जिन्हें पश्चात्वर्ती माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा निकाला जा सकता है । विजय कालिया और अन्य बनाम प्रिसमियां केविल ई. सिस्टेमिक एस. आर. एल. और अन्य [2020 की सिविल अपील संख्या 1544, जो तारीख 13 फरवरी, 2020 को निर्णीत की गई] वाले मामले

में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस दलील को अस्वीकृत कर दिया कि चूंकि चुनौती के अंतर्गत पंचाट एक अन्य पंचाट से असंगत और परस्पर विरोधी है, वह अपास्त किए जाने योग्य है । अत:, द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा निकाले गए निष्कर्ष किसी स्पष्ट अवैधता या असंगतता से ग्रसित नहीं है और 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 34 के अधीन मध्यक्षेप के लिए कोई अन्य आधार उपलब्ध नहीं है । यदि दलील के प्रयोजनार्थ तृतीय माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा निकाले गए निष्कर्षों पर विचार किया जाए, तो वे निष्कर्ष परियोजना में कारित विलंब से संबंधित है और भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के परिसमापन का नुकसान अधिरोपित करने के अधिकार से संबंधित हैं । बढ़ाई गई दरों के असंदाय के लिए बढ़ोतरी या प्रतिकर पंचाट संख्या 3 की विषयवस्तु नहीं है । अत:, पंचाट संख्या 3 में समाविष्ट किसी भी निष्कर्ष को पंचाट संख्या 2 के माध्यम से ठेकेदार के पक्ष में प्रतिकर/दर पुनरीक्षण/बढ़ोतरी प्रदान किए जाने के लिए पंचाट पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ वर्तमान याचिका में सम्मिलित या उल्लिखित नहीं किया जा सकता । अत: ठेकेदार का पक्षकथन मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है और अस्वीकृत किए जाने योग्य है । बहुसंख्यक मध्यस्थों द्वारा पंचाट पारित किए जाते समय निकाले गए निष्कर्ष स्पष्ट और संक्षिप्त हैं, उनके द्वारा मध्यक्षेप की परिधि अत्यंत सीमित है । अत: यह न्यायालय वर्तमान याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाती । माध्यस्थम् कार्यवाहियों में विवादों की गुणज़ता पर भी प्रभावी ढंग से यह सुनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ विचार किया जाना चाहिए कि लंबी अवधि तक चलने वाली माध्यस्थम् यात्रा, जैसाकि वर्तमान मामले में हुआ है, से बचा जाए । माध्यस्थम् के पक्षों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे माध्यस्थम् प्रक्रियाओं का प्रयोग सद्भाविक अनुशासन के साथ करें । हमको ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसा किए जाने की स्पष्टत: आवश्यकता है । दिल्ली उच्च न्यायालय ने अधिनियम के अधीन अनेक वृत्तिक निर्देश जारी किए हैं । ऐसा एक निर्देश तारीख 7 दिसंबर, 2009 का वृत्तिक निर्देश संख्या 16/नियम/दि.उ.न्या. है, जिसके

अंतर्गत यह अपेक्षित है कि जब 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 9 के अधीन याचिकाएं फाइल की जाती हैं, तो पक्षों के लिए यह आज्ञापक हो जाता है कि वे इस बात का उल्लेख करें कि समान वाद कारण के आधार पर कोई अन्य याचिका फाइल नहीं की गई है । अधिकरणों की गुणज़ता और असंगत/परस्पर विरोधी पंचाटों से बचने के प्रयास के रूप में, जैसाकि वर्तमान मामले में घटित हुआ है, निम्नलिखित निर्देश जारी किए गए हैं – (i) 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 34 के अधीन प्रत्येक याचिका (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'धारा 34 की याचिका' कहा गया है), न्यायालय की शरण में जाने वाले पक्षों को इस तथ्य का प्रकटीकरण करना चाहिए कि समान संविदा या संविदाओं की श्रृंखला के संबंध में कोई अन्य कार्रवाई लंबित है या उसका न्यायनिर्णयन किया गया है और यदि ऐसा किया गया है, तो उक्त कार्यवाहियां किस प्रक्रम पर हैं और वह कौन सा फोरम है जहां वे कार्रवाइयां लंबित हैं या उनका न्यायनिर्णयन किया गया है, (ii) उस समय बिंदु पर, जब धारा 34 के अंतर्गत किसी याचिका की सुनवाई की जाती है, तो पक्षों को इस बात का प्रकटीकरण करना होगा कि क्या समान संविदा के संबंध में धारा 34 के अधीन कोई अन्य याचिका लंबित है और यदि लंबित है, तो परस्पर विरोधी निष्कर्षों से बचने के लिए दोनों याचिकाओं के एक साथ निस्तारण की ईप्सा की जानी चाहिए, (iii) पक्षों को किसी माध्यस्थम् अधिकरण के मध्यस्थ/गठन की नियुक्ति की ईप्सा करते हुए फाइल की गई याचिकाओं में इस बात का प्रकटीकरण करना चाहिए कि क्या समान संविदा या संविदाओं की श्रृंखला से उद्भूत होने वाले दावों के संबंध में कोई अधिकरण पहले ही दोनों पक्षों में से किसी भी पक्ष के दावों के न्यायनिर्णयन के लिए गठित किया जा चुका है । यदि ऐसा कोई अधिकरण पहले ही गठित किया जा चुका है, तो परस्पर विरोधी या एक दूसरे के असंगत निष्कर्षों से बचने के लिए धारा 11 के अधीन माध्यस्थम् संस्था या उच्च न्यायालय द्वारा समान अधिकरण या एकल अधिकरण को मामले को निर्दिष्ट किए जाने के प्रयास किए जा सकते हैं, (iv) माध्यस्थम् खंडों को समाविष्ट करने वाली

संविदाओं के अंतर्गत नियुक्ति प्राधिकारी को नियुक्ति या पृथक् मध्यस्थों/माध्यस्थम् अधिकरणों के गठन से समान संविदा या संविदाओं की समान श्रृंखला से उद्भूत होने वाले विभिन्न दावों/विवादों से बचना चाहिए । (पैरा 43, 44 और 45)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2011]	(2011) 3 एस. सी. सी. 507 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 987 : **इंडियन आयल कारपोरेशन** बनाम **एस. पी. एस. इंजीनियरिंग कंपनी लिमिटेड** ;	31,35
[2010]	ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 1296 : **डॉल्फिन ड्रिलिंग लिमिटेड** बनाम **तेल और प्राकृतिक गैस आयोग** ;	33
[1990]	ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 53 : **के. वी. जार्ज** बनाम **सचिव, जल और शक्ति विभाग, त्रिवेंद्रम और अन्य** ।	35

प्रकीर्ण रिट अधिकारिता : 2011 की मूल प्रकीर्ण रिट याचिका संख्या 680.

माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 9 के अधीन प्रकीर्ण आवेदन ।

याची की ओर से सर्वश्री मार्कंडेय (वरिष्ठ अधिवक्ता), चिराग श्राफ और सुश्री निहाल डोगरा

प्रत्यर्थियों की ओर से सुश्री पद्मप्रिया और ध्रुव नायर

निर्णय

मुकदमेबाजी की समस्याओं के लिए माध्यस्थम् को सर्वरोग-हरण करने वाला रामबाण साबित होना चाहिए था । किंतु 'वैकल्पिक विवाद समाधान' तंत्र के रूप में माध्यस्थम् अनेक कारणोंवश एक जटिल मार्ग

बन गया है जैसेकि मामले के समाधान में विलंब, पंचाट के प्रवर्तन में चुनौतियां, अत्यधिक लागत इत्यादि । एक अन्य कारण, जो माध्यस्थम् प्रक्रिया को जटिल बना रहा है, वह 'गुणजता' है, जैसेकि समान पक्षों के मध्य समान संविदा के संबंध में या संविदाओं की समान श्रृंखला के संबंध में माध्यस्थम् का बारंबार अवलंब लिया जाना, माध्यस्थम् के लिए बारंबार निदेश किया जाना, बारंबार माध्यस्थम् अधिकरणों का गठन किया जाना, बारंबार पंचाट पारित किया जाना और अन्य चुनौतियां । न्यायालयों द्वारा निर्णय पारित किए जाने के द्वारा और विधि में संशोधन किए जाने के द्वारा इस प्रणाली को प्रभावी बनाए जाने के प्रयोजनार्थ बारंबार कदम उठाए गए हैं, किंतु अभी और भी बहुत कुछ किया जाना शेष है ।

संक्षिप्त तथ्य

2. वर्तमान मामले में गैमन – एटलांटा जे. वी., जो गैमन इंडिया लिमिटेड और एटलांटा लिमिटेड (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'ठेकदार' कहा गया है) और भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण का एक संयुक्त उपक्रम है, के मध्य उड़ीसा राज्य में राष्ट्रीय राजमार्ग संख्या 5 पर 387.700 किमी. से 414.000 किमी. तक (खुर्दा से भुवनेश्वर) संविदा आदेश 1 (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'परियोजना' कहा गया है) पर चार लेन के राजमार्ग को छह लेन के राजमार्ग के रूप में चौड़ाकरण किए जाने और विद्यमान 2 लेन के परिवहन मार्ग को मजबूती किए जाने के प्रयोजनार्थ तारीख 23 दिसंबर, 2000 को एक करार निष्पादित किया गया था । इस कार्य का मूल्य लगभग 18.9 करोड़ रुपए था । संविदा के प्रारंभ की तारीख 15 जनवरी, 2001 निर्धारित की गई थी और इस परियोजना को 36 माह के भीतर अर्थात् तारीख 4 जनवरी, 2004 तक निष्पादित किया जाना चाहिए था ।

3. यह परियोजना विहित समय के भीतर निष्पादित नहीं की जा सकी । परियोजना को पूर्ण किए जाने के प्रयोजनार्थ तारीख 31 दिसंबर, 2006 तक समय विस्तार प्रदान किए गए । वाहनों के यातायात की अनुज्ञा मुख्य परिवहन मार्ग पर चालू रखे जाने के प्रयोजनार्थ मार्च, 2007 में प्रदान की गई थी और इसके परिणामस्वरूप ठेकेदार द्वारा यह

उपधारणा की गई कि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ने परिवहन मार्ग का कब्जा ले लिया था और इसलिए कार्यपूर्ण हो गया था ।

पंचाट संख्या 1 - तारीख 5 अक्तूबर, 2007

4. परियोजना के निष्पादन के अनुक्रम के दौरान पक्षों के मध्य कुछ दावों के संबंध में विवाद उद्भूत हुए । इन विवादों को ठेकेदार और भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण, दोनों के द्वारा उठाया गया तारीख विवाद पुनर्विलोकन बोर्ड को तारीख 1 अगस्त, 2004 को विशिष्ट आवेदन की शर्तों के उपखंड 67.1 के निबंधनों के अनुसार गठित किया गया था । यह अभिकथित किया गया है कि विवाद निस्तारण बोर्ड ने उसके गठन के पूर्ववर्ती अवधि से संबंधित विवाद्यकों को समाधान करने में अपनी असमर्थता के बाबत अभिव्यक्त रूप से संसूचित किया था । अतः, विवाद निस्तारण बोर्ड ने विवाद्यकों का समाधान नहीं किया और तद्नुसार ठेकेदार ने तारीख 27 जनवरी, 2005 की सूचना द्वारा विशिष्ट आवेदन की शर्तों के उपखंड 67.3 के अधीन माध्यस्थम् का अवलंब लिया । माध्यस्थम् के लिए जिन सुसंगत दावों को निर्दिष्ट किया गया, वे निम्नलिखित हैं :-

> "दावा 2.1 : अतिरिक्त और प्रत्याक्षित लाभ की रकम पर उपगत हानियों के लिए प्रतिकर ।
>
> दावा 2.2 : स्थापित की गई मशीनरी और उपकरणों की घटाई गई उत्पादकता के लिए प्रतिकर ।
>
> दावा 2.3 : करार में मूल्य की बढ़ोतरी (मूल्य समायोजन) के उपबंध के अधीन उपलब्ध अनुतोष के अलावा विस्तारित अवधि के दौरान सामग्री और श्रम की बढ़ी हुई लागत को आच्छादित किए जाने के लिए दरों का पुनरीक्षण ।"

5. माध्यस्थम् अधिकरण, जिसमें सर्वश्री पी. वी. विजय, सी. सी. भट्टाचार्य और आर. टी. अत्रे सदस्य थे, की नियुक्ति की गई और तारीख 5 अक्तूबर, 2007 को पंचाट पारित किया गया (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'पंचाट संख्या 1' कहा गया है) । दावा संख्या 2.1, 2.2 और 2.3 के संबंध में पंचाट संख्या 1 में समाविष्ट निष्कर्ष निम्नलिखित हैं :-

"दावा संख्या 2 के संबंध में ईप्सित अनुतोष को परिसीमा द्वारा बाधित पाया गया, चूंकि यद्यपि विवाद पुनर्विलोकन बोर्ड तारीख 1 अगस्त, 2004 को गठित हुआ था, फिर भी उसने तारीख 17 नवंबर, 2004 को अपनी सिफारिशें जारी करने में असमर्थता व्यक्त की । अतः, 56 दिनों की परिसीमा के बाबत यह उपधारणा की गई कि वह तारीख 17 नवंबर, 2004 को आरंभ हो गई थी और इस प्रकार तारीख 27 जनवरी, 2005 को जारी की गई सूचना परिसीमा की विहित अवधि के भीतर पाई गई ।

ठेकेदार ने भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा अभिकथित निम्नलिखित छह उल्लंघनों के आधार पर प्रतिकर का दावा किया था –

(1) मुख्य कार्मिकों की विलंबित नियुक्ति,

(2) संदाय में विलंब,

(3) दिसंबर, 2003 से मार्च, 2005 तक निर्माण संविदा का अपरोक्ष रूप से निलंबन,

(4) समय के पर्याप्त विस्तार की मंजूरी में विफलता, और

(5) विवाद पुनर्विलोकन बोर्ड के गठन में विफलता,

(6) कार्यस्थल उपलब्ध कराए जाने में विलंब ।

जहां प्रथम पांच अभिकथित उल्लंघनों का संबंध है, माध्यस्थम् अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि या तो भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण की कार्रवाई कार्य की प्रगति को तात्विक रूप से प्रभावित नहीं कर रही थी, या दावेदार की तैयारी अपर्याप्त थी या ठेकेदार को वैकल्पिक अनुतोष उपलब्ध है/वैकल्पिक अनुतोष का आश्रय ले लिया है । इसलिए यह अभिनिर्धारित किया गया कि ठेकेदार इन आधारों पर किसी भी प्रतिकर का दावा करने के योग्य नहीं है ।

जहां तक छठे अभिकथित उल्लंघन का संबंध है, माध्यस्थम्

अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला कि ठेकेदार का आरंभिक कार्य भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण की खंड 42.01 के अधीन बाध्यताओं को पूर्ण करने में अक्षमता के कारण प्रभावित हुआ था, तथापि, जब इस अवरोध को हटाया गया, तो ठेकेदार कार्य की प्रगति को आगे बढ़ाने में समर्थ नहीं था । इसलिए, प्रतिकर के लिए ठेकेदार का दावा आरंभिक संविदा अवधि तक निर्बंधित था, जिस समयावधि के दौरान अनुमानत: लगभग 37 करोड़ रुपए की लागत का कार्य प्रभावित हुआ ।

जहां तक दावा 2.1 का संबंध, चूंकि ठेकेदार द्वारा अतिरिक्त कार्य के संबंध में संसाधनों को कार्य पर लगाए जाने को और उनका क्षमता से कम उपयोग किए जाने के बाबत यह स्वीकार किया गया कि उनका उपयोग 14.28 प्रतिशत की सीमा तक किया गया और इस प्रकार ठेकेदार के पक्ष में 5.28 करोड़ रुपए के प्रतिकर (14.28/100 x 37) का पंचाट पारित किया गया । तथापि, लाभ में कमी के बाबत दावे को इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया कि ठेकेदार वर्तमान में भी कार्य का निष्पादन कर रहा है और वह निष्पादित किए गए कार्य के सामंजस्य में लाभ या हानि अर्जित करेगा ।

जहां तक दावा 2.2 का संबंध है, माध्यस्थम् अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया कि यद्यपि आरंभिक संविदा अवधि के दौरान 37 करोड़ रुपए की कीमत का कार्य प्रभावित हुआ, चूंकि ठेकेदार स्वयमेव ही मशीनरी और उपकरणों के क्षमता से निम्न प्रयोग के लिए दायी था, इसलिए केवल 5 प्रतिशित की सीमा तक प्रतिकर अर्थात् 1.85 करोड़ रुपए (5/100 x 37) का पंचाट पारित किया जा सका ।

जहां तक दावा 2.3 का संबंध है, यह मताभिव्यक्ति की गई कि इस उपदावे का उल्लेख उन दावों की सूची में नहीं किया गया है, जिनको तारीख 27 जनवरी, 2005 के माध्यस्थम् का अवलंब लेते हुए सम्मिलित किया गया था और जिसके पश्चात् तारीख 21 फरवरी, 2005 का पत्र प्रेक्षित किया गया था । अत: दावा 2.3

माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट किए गए संदर्भ की शर्तों के बाहर था ।"

6. अतः, पंचाट संख्या 1 के अनुसार दावा संख्या 2.1 और 2.2 को मंजूर कर लिया गया और दावा संख्या 2.3 को इस आधार पर अस्वीकृत कर दिया गया कि यह दावा माध्यस्थम् के निदेश की शर्तों के बाहर था ।

7. पंचाट संख्या 1 को ठेकेदार और भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा 2008 के मूल प्रकीर्ण याचिका संख्या 107 और 99 में चुनौती दी गई थी । ठेकेदार ने 2008 की मूल प्रकीर्ण याचिका संख्या 99 में दावा संख्या 2.3 के संबंध में अपनी चुनौती को वापस ले लिया, जिसको द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण की शरण में जाने की स्वतंत्रता प्रदान करते हुए अस्वीकृत कर दिया गया । यह स्वतंत्रता तारीख 13 मार्च, 2009 के आदेश द्वारा निम्नलिखित शब्दों में प्रदान की गई थी :-

> "याची दावा 2.3 को माध्यस्थम् के समक्ष चुनौती देने की स्वतंत्रता के साथ इस दावे को दी गई चुनौती को वापस लिए जाने की ईप्सा करता है । प्रत्यर्थी के काउंसेल को प्रत्यर्थी के अधिकारों और उसके द्वारा उक्त दावे के बाबत माध्यस्थम् के समक्ष अभिवाक् करने की स्वतंत्रता के साथ दी गई दलीलों से प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुए बिना संशोधन को मंजूर किए जाने में कोई एतराज नहीं है ।
>
> तद्नुसार, आवेदन मंजूर किया जाता है । दावा 2-3 के संबंध में जिन आधारों का अवलंब किया गया, वे आधार XVI और XVII और दावा 2.3 के संबंध में प्रार्थना वाले पैराग्राफ को पूर्वोक्त निबंधनों के अनुसार और याची को प्रत्यर्थी द्वारा माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष उक्त दावे के विरोध में समस्त अभिवाक किए जाने के अधिकारों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष उक्त दावे की पैरवी करने की स्वतंत्रता प्रदान करते हुए संशोधित किए जाने की अनुज्ञा प्रदान कर दी गई है ।
>
> (बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

8. तत्पश्चात् पंचाट संख्या 1 को इस न्यायालय के विद्वान् एकल

न्यायाधीश द्वारा तारीख 15 नवंबर, 2016 को मान्य ठहराया गया । तत्पश्चात् दो विद्वान् खंड न्यायपीठों ने भी पंचाट को तारीख 18 जनवरी, 2017 और 20 फरवरी, 2017 के निर्णयों द्वारा मान्य ठहराया । इन निर्णयों के विरुद्ध फाइल की गई दो विशेष अनुमति याचिकाओं, जो 2007 की विशेष अनुमति याचिका (सिविल) संख्या 17022 और 22663 थीं, को भी तारीख 8 अगस्त, 2017 और 11 सितंबर, 2017 के आदेशों द्वारा खारिज कर दिया गया । अत: पंचाट संख्या 1 को अंतिमता प्राप्त हो चुकी है ।

9. ठेकेदार ने वर्ष 2007 में मात्रा बिल की मद संख्या 4.02(बी.) के अंतर्गत ट्रैक कोट के बिल के संदाय के संबंध में विवाद निस्तारण बोर्ड की अधिकारिता का अवलंब लिया । विवाद निस्तारण बोर्ड ने उक्त दावे को अस्वीकृत कर दिया । अत:, उक्त दावा कतिपय अन्य दावों के साथ तीन सदस्यीय के माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट किया गया, जिनके नाम थे, सर्वश्री स्वरूप सिंह, सी. सी. भट्टाचार्य और न्यायमूर्ति ई. पद्मनाभम् (सेवानिवृत्त) । यह अधिकरण तारीख 2 जनवरी, 2008 को गठित किया गया था । तत्पश्चात् पंचाट संख्या 1 का दावा 2.3 इस न्यायालय द्वारा तारीख 13 मार्च, 2009 को प्रदान की गई अनुज्ञा के कारण माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष फाइल किया गया । ठेकेदार का दावा तारीख 21 फरवरी, 2011 के पंचाट (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'पंचाट संख्या 2' कह कर निर्दिष्ट किया गया है) द्वारा 2 : 1 के बहुमत द्वारा अस्वीकृत कर दिया गया । अल्पमत द्वारा प्रदान किए गए पंचाट द्वारा ठेकेदार का दावा मंजूर कर लिया गया था ।

10. द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट विभिन्न दावे, जिनके द्वारा पंचाट संख्या 2 पारित किया गया था, निम्नलिखित हैं :-

> "1. कार्य की समाप्ति की अनुध्यात तारीख के परे निष्पादित किए गए अधिशेष कार्य के बाबत सामग्री, श्रम, का इंतजाम इत्यादि की बढ़ी हुई लागत पर उपगत अतिरिक्त व्यय के कारण कारित हानियों के लिए प्रतिकर - 1456.83 लाख रुपए (माध्यस्थम् अधिकरण संख्या 1 के समक्ष दावा 2.3) ।

2. ट्रैक कोट का संदाय – 49,17,00,822/- रुपए ।

3. दावा संख्या 1 और दावा संख्या 2 के अधीन पारित किए गए पंचाट की रकम पर 18 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से वादकालीन और भविष्य का ब्याज ।

4. माध्यस्थम् कार्यवाहियों की लागत ।"

11. दावा संख्या 1 के संबंध में बहुमत से पारित पंचाट के निष्कर्षों का उल्लेख नीचे किया गया है :–

"दावा संख्या 1 परिसीमा द्वारा बाधित नहीं है । माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा निकाले गए निष्कर्ष निम्नलिखित हैं –

'1.41 दावा (सी.-94) विवाद निस्तारण बोर्ड को तारीख 17 नवंबर, 2004 को निर्दिष्ट किया गया था । विवाद निस्तारण बोर्ड 56 दिनों की अवधि के भीतर अपनी सिफारिशें प्रस्तुत नहीं कर सका । अतः, ठेकेदार ने तारीख 25 जनवरी, 2002 को दावा संख्या 2.3 (जो इस मामले में दावा संख्या 1 है) को सम्मिलित करते हुए कतिपय दावों के संबंध में माध्यस्थम् खंड (सी.-98) का अवलंब लिया । प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण ने यह निष्कर्ष निकाला कि उक्त दावा अधिकरण को किए गए निर्देश के परिक्षेत्र के बाहर है । यह मताभिव्यक्ति/आदेश तारीख 5 अक्तूबर, 2007 (सी.-101) के पंचाट में अभिलिखित है । यह दावा सामग्री, श्रम का इंतजाम इत्यादि की बढ़ी हुई लागत पर उपगत अतिरिक्त व्यय के कारण वहन की गई हानियों के बाबत प्रतिकर की ईप्सा करते हुए तारीख 14 जनवरी, 2004 के पश्चात् फाइल किया गया है । तत्पश्चात् ठेकेदार ने तारीख 25 जनवरी, 2005, अर्थात् जब कार्य प्रगति पर था, को माध्यस्थम् खंड का अवलंब लिया । यह अवधि भली-भांति परिसीमा अधिनियम के अनुच्छेद 137 के उपबंध के भीतर है । इस दावे का न्यायनिर्णयन प्रथम अधिकरण द्वारा नहीं किया गया है ।'

द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण ने गुणागुण के आधार पर

अभिनिर्धारित किया कि अभियंता की नियुक्ति में दो सप्ताह का विलंब और भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा ठेकेदार को सूचना दिए जाने में पांच सप्ताह का विलंब लघु अवधि का विलंब है और यह विलंब कार्य की प्रगति को प्रभावित करने वाला नहीं है ।

भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा ठेकेदार को बाधामुक्त कार्यस्थल उपलब्ध कराए जाने में विलंब कारित किया गया था ।

द्वितीय माध्यस्थम् प्राधिकरण ने आगे स्थिति का विश्लेषण किया कि कार्य का कुल मूल्य लगभग 118.90 करोड़ रुपए था । 5031.43 लाख रुपए की कीमत का कार्य जनवरी, 2004 अर्थात् संविदा की समाप्ति के लिए अनुध्यात अवधि तक पूर्ण किया जा चुका था । धनीय आधार पर यह कार्य कुल कार्य का 42.3 प्रतिशत था । अधिशेष कार्य कुल कार्य का 57.7 प्रतिशत था, जिसके लिए बाधा मुक्त कार्यस्थल पहले से उपलब्ध था । ठेकेदार ने इस कार्य को पूर्ण किए जाने में चार वर्ष का समय लगाया । अतः, स्पष्टतः कार्यस्थल उपलब्ध होने के बावजूद ठेकेदार द्वारा कार्य निर्वहन का स्तर निम्न था, जिसको वास्तव में तारीख 15 जून, 2004 के कार्यवृत्त में अभिलिखित किया गया है ।

जहां तक संदाय में विलंब का संबंध था, ऐसे तीन बिल थे, जो असंदत्त बने रहे । इन बिलों का संदाय तारीख 15 अक्तूबर, 2003, 16 दिसंबर, 2003 और 6 मार्च, 2004 को किया गया था । यह अभिनिर्धारित किया गया था कि संदाय में विलंब अत्यधिक लघु प्रकृति का था और कार्य में बाधा उत्पन्न करने वाला नहीं था । आगे यह मताभिव्यक्ति की गई थी कि ठेकेदार किसी भी स्थिति में खंड 60.8 के अधीन विलंबित अवधि के लिए ब्याज का हकदार था ।

माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा विस्तारपूर्वक तथ्यात्मक विश्लेषण के पश्चात् इस आधार को अस्वीकृत कर दिया गया था

कि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्‌वारा विलंब के कारण संपूर्ण कार्य निलंबित कर दिया गया था । माध्यस्थम् अधिकरण ने प्रतिकर के लिए ठेकेदार के दावे को अस्वीकृत किए जाने के प्रयोजनार्थ पंचाट संख्या 1, जिसमें इस महत्वपूर्ण विवाद्‌यक पर विचार किया गया है, का भी अवलंब लिया ।

समय विस्तार प्रदान न किए जाने पर पंचाट संख्या 2 पर विचार नहीं किया गया था चूंकि वह विवाद निस्तारण बोर्ड के समक्ष लंबित था ।

द्‌वितीय माध्यस्थम् अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया कि विवाद निस्तारण बोर्ड के गठन में कोई विलंब कारित नहीं किया गया था ।

माध्यस्थम् अधिकरण ने पंचाट संख्या 2 में दिए गए पूर्वोक्त निष्कर्षों को दृष्टि में रखते हुए संविदा के खंड 70.3 और 70.2 पर विचार किया । उक्त खंडों को यहां नीचे उद्धृत किया गया है –

'**उपखंड 70.2 : लागत में अन्य परिवर्तन** : इस सीमा तक कि ठेकेदार की लागत में किसी बढ़ोतरी या कमी के बाबत पूर्ण प्रतिकर संविदा के इस या अन्य खंडों के उपखंडों द्‌वारा आच्छादित नहीं है, किंतु संविदा में सम्मिलित इकाई की दरें और मूल्य के संबंध में यह उपधारणा की जाएगी कि लागत में ऐसी किसी बढोतरी या कमी की आकस्मिकता को आच्छादित किए जाने के प्रयोजनार्थ रकमें सम्मिलित हैं ।

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

उपखंड 70.3 : समायोजन फार्मूला : लागत में परिवर्तन के संबंध में अंतरिम संदाय प्रमाणपत्रों के बाबत समायोजन और विधायन निम्नलिखित फार्मूला के आधार पर विनिर्धारित किया जाएगा –

$$Pn = A + b\frac{Ln}{Lo} + c\frac{Ma}{Mo} + \frac{d\ Fn}{Fo} + \frac{Bn}{B3}$$ '

जहां :

Pn = मूल्य समायोजन कारक है, जिसको विषयांतर्गत माह में किए गए कार्य के संदाय के लिए रकम के बाबत लागू किया जाना होता है और उपखंड 60.1(घ) और उपखंड 60.1(ङ) और (च) के साथ विनिर्धारित किया जाना होता है, जहां इस प्रकार के फेरफार और दैनिक कार्य अन्यथा रूप से समायोजन के अध्यधीन नहीं है ।

A = 0.50, b = 0.15, c = 0.25, d = 0.10

Ln. Mn. Fn. इत्यादि 'n' माह के लिए विनिर्दिष्ट मुद्रा में लागत तत्व के चालू लागत सूचकांक या निदेशक मूल्य हैं और जिनको उपखंड 70.5 के अनुसरण में विनिर्धारित किया जाता है जो प्रत्येक लागत तत्व के संबंध में लागू होते हैं : और

Lo. Mo. Fo. इत्यादि लागत आधारी सूचकांक या निदेशक मूल्य हैं, जो उपखंड 70.5 में विनिर्दिष्ट तारीख पर लागत तत्वों के ऊपर के सदृश हैं । वे रकमें, जो ठेकेदार को भारतीय रुपए के अलावा किसी अन्य मुद्रा या मुद्राओं में मूल्य समायोजन कारक के रूप में संदेय विनिर्धारित की गई हैं, को भारतीय रुपयों से विनिमय दरों के आधार पर संदाय की मुद्रा या मुद्राओं में परिवर्तित किया जाता है, जैसाकि भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा चालू सूचकांक की तारीख पर और न कि उन दरों पर, जिनको बोली के परिशिष्ट में स्थापित किया गया है, यदि कोई हों, विनिर्धारित किया जाए ।

माध्यस्थम् अधिकरण दोनों खंडों का विश्लेषण किए जाने के पश्चात् निम्नलिखित निष्कर्ष पर पहुंचा –

> '1.49. निर्माण कार्य के लिए प्रत्येक संविदा में कुछ अंतर्निहित अनिश्चितताएं समाहित होती हैं । ये अनिश्चितताएं निर्माण अवधि के दौरान दावेदार और प्रत्यर्थी द्वारा अन्य पक्षों के हितार्थ बाध्यताओं के समयानुसार पूर्ण किए जाने में चूक के कारण उद्भूत होती हैं । इस कारणवश कार्य को पूर्ण किए जाने में विलंब कारित होता है । इस प्रकार की कुछ

अनिश्चितताओं के वित्तीय प्रभाव का वास्तव में आकलन नहीं किया जा सकता । इसलिए, इसको संविदा करार में कतिपय उपबंध/शर्तें विरचित किए जाने के द्वारा विनियमित किया जाता है ।

1.50. प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण ने दावा 2.1 और दावा 2.2 के संबंध में अलग-अलग 5.28 करोड़ रुपए और 1.85 करोड़ रुपए के पंचाट पारित किए हैं । प्रकट रूप से भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 55 के उपबंध जहां कहीं भी लागू होते हैं, प्रथम माध्यस्थम् द्वारा पारित पंचाट द्वारा आच्छादित होते हैं ।

1.51. संविदा करार के खंड 70.2 के अधीन उपबंधों में प्रतिपरीक्षा के दौरान साक्षी सी.डब्ल्यू.-1 के कथन से दावेदार को समर्थन प्राप्त नहीं होता ।

1.52. माध्यस्थम् अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया है कि यह दावा उपखंड 70.2 के उपबंधों के अधीन सफल नहीं हो सकता । उपखंड 70.3 के उपबंधों के परे संदाय के लिए कुछ भी ग्राह्य नहीं है । अतः, मात्र शून्य रुपए की रकम का पंचाट पारित किया गया ।'"

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

12. वर्तमान याचिका में पंचाट संख्या 2 को चुनौती दी गई है ।

पंचाट संख्या 3 - तारीख 20 फरवरी, 2012

13. भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ने ठेकेदार पर विलंब कारित किए जाने के लिए परिनिर्धारित नुकसानी अधिरोपित की । तारीख 24 मार्च, 2008 को विवाद निस्तारण बोर्ड को सात विवाद निर्दिष्ट किए गए थे, तथापि, ठेकेदार द्वारा विवाद निस्तारण बोर्ड की सिफारिशों से असंतुष्ट होकर तारीख 23 दिसंबर, 2008 के पत्र द्वारा तृतीय माध्यस्थम् का अवलंब लिया गया । सर्वश्री आर. एच. तडवी, वी. बेलायुथम और वी. एस. कारंडिकर को समाविष्ट करने वाले माध्यस्थम् अधिकरण को निम्नलिखित विवाद निर्दिष्ट किए गए :–

"1. अभिकथित परिनिर्धारित नुकसानी की वसूली ।

2. भवन और अन्य निर्माण कर्मकार कल्याण उपकर की वसूली ।

3. अभियंता को यान उपलब्ध न कराए जाने के कारण अभिकथित शास्ति की वसूली ।

4. वैवेकिक अग्रिम की समयपूर्व वसूली ।

5. वैवेकिक अग्रिम पर ब्याज ।

6. सफाई और खुदाई से संबंधित भूमिगत कार्य ।

7. प्रत्यर्थी द्वारा सुरक्षित अग्रिम की समयपूर्व कटौती के कारण ब्याज के संदाय के लिए दावा ।

8. वादकालीन और भविष्यगत ब्याज ।

9. माध्यस्थम् कार्यवाही की लागत ।"

14. परिनिर्धारित नुकसानी के रूप में संदत्त रकम की वसूली के लिए तारीख 20 फरवरी, 2012 के पंचाट (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'पंचाट संख्या 3' कहा गया है) द्वारा ठेकेदार का दावा मंजूर कर लिया गया । दावा संख्या 1 के संबंध में पंचाट संख्या 3 में निकाले गए निष्कर्षों का उल्लेख नीचे किया गया है :-

"**दावा 1 :** ठेकेदार को उसके ऊपर अधिरोपित परिनिर्धारित नुकसानी की संपूर्ण रकम वापस लौटाया जाना मंजूर किया गया था । रकम वापस इस आधार पर लौटाई गई थी कि ठेकेदार आगे समय विस्तार का हकदार था और इसलिए परिनिर्धारित नुकसानी का अधिरोपण अवैध था । पंचाट में यह मताभिव्यक्ति की गई थी कि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ठेकेदार पर परिनिर्धारित नुकसानी अधिरोपित नहीं कर सकता था, चूंकि वे अवरोध मुक्त कार्यस्थल उपलब्ध कराने में विफल रहे थे और उन्होंने सड़क का कब्जा भी ले लिया था । पंचाट में यह निष्कर्ष भी निकाला गया कि संविदा के अतिलंघन में परिनिर्धारित नुकसानी के अधिरोपण के

लिए पूर्व सूचना जारी नहीं की गई थी । इसके अतिरिक्त, चूंकि ठेकेदार को प्रमाणित किए जा चुके संदाय रोक लिए गए थे, इसलिए यह अभिनिर्धारित किया गया कि ठेकेदार को संविदा के निबंधनों के अनुसार कार्य की गति को धीमा कर देने का अधिकार प्राप्त था । ठेकेदार को परिनिर्धारित नुकसानी के बाबत रोके गए संदाय के लिए 10 प्रतिशत प्रतिवर्ष चक्रवृद्धि मासिक ब्याज का संदाय किए जाने का भी पंचाट पारित किया गया था । आगे की परिनिर्धारित नुकसानी के अधिरोपण को प्रतिषिद्ध किए जाने के प्रयोजनार्थ घोषणात्मक पंचाट भी पारित किया गया था ।"

15. पंचाट संख्या 3 को विद्वान् एकल न्यायाधीश और इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा मान्य ठहराया गया है । भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ने भी अधिनिर्णीत रकम का संदाय कर दिया है और पंचाट को अंतिमता प्राप्त हो चुका है ।

वर्तमान याचिका की प्रक्रियात्मक इतिहास

16. वर्तमान याचिका अगस्त, 2011 में फाइल की गई थी । आरंभिक रूप से स्वयमेव ठेकेदार द्वारा निवेदन किया गया था कि वह दावा संख्या 2 अर्थात् ट्रैक कोट के संदाय से संबंधित आक्षेप पर बल नहीं दे रहा । उसके इस निवेदन को तारीख 20 सितंबर, 2011 के आदेश में अभिलिखित किया गया था, जो निम्नलिखित है :–

> "याची के विद्वान् काउंसेल ने उनको दिए गए अनुदेशों के आधार पर यह निवेदन किया कि याची दावा संख्या 2 के संबंध में पंचाट के विरुद्ध फाइल किए गए आक्षेपों पर बल नहीं दे रहा । विद्वान् काउंसेल ने आगे यह निवेदन भी किया कि समान संविदा के अधीन नुकसान परिनिर्धारित नुकसानी अधिरोपित किए जाने के संबंध में एक अन्य माध्यस्थम् कार्यवाही एक अन्य अधिकरण के समक्ष निस्तारण के लिए लंबित है । उन कार्यवाहियों में दलीलें सुनी गई थीं और मामले को पंचाट पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ आरक्षित कर लिया गया था ।"

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

17. तत्पश्चात् तारीख 20 जनवरी, 2017 को याचिका पैरवी न किए जाने के कारण खारिज कर दी गई थी । तथापि, बाद में तारीख 15 मार्च, 2017 को इस याचिका को सुनवाई के लिए पुन: पुनर्स्थापित किया गया । पक्षों के काउंसेलों ने तारीख 6 अगस्त, 2019 के आदेश द्वारा न्यायालय द्वारा उठाए गए एक प्रश्न के उत्तर में जो निवेदन किए, वे निम्नलिखित हैं :-

> "याची के विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल डा. पी. सी. मार्कंडेय ने निवेदन किया कि उनके मौवक्किल के अनुसार मूल संविदा की अवधि में ही सूचकांक स्थिरीकृत कर दिए गए थे । उन्होंने कुछ पत्रों का अवलंब लिया, जिनको अभिलेख पर प्रस्तुत किया गया है । इसलिए, उनके अनुसार वास्तव में किसी भी बढ़ाई गई रकम का संदाय नहीं किया गया था ।
>
> इसके विपरीत भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के विद्वान् काउंसेल ने निवेदन किया कि खंड 70.3 के अनुसार बढ़ाई गई रकम का संदाय अंतिम आई. पी. सी. संख्या 94 तक याची को 15,29,15,363/- रुपए की रकम के रूप में कर दिया गया है ।
>
> पूर्ण न्यायालय द्वारा संदर्भ पर पारित निर्णय को दृष्टि में रखते हुए अग्रिम सुनवाई को तारीख 4 सितंबर, 2019 तक के लिए स्थगित दिया गया था ।"

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

18. अत:, एकमात्र दावा जिस पर इस याचिका में विचार किया जाना है, दावा संख्या 1 है जिसमें याची का पक्षकथन यह है कि दरों का पुनरीक्षण नहीं किया गया था और इसलिए ठेकेदार अतिरिक्त रकम का हकदार है ।

विद्वान् काउंसेलों के निवेदन

19. ठेकेदार की ओर से उपस्थित विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री मार्कंडेय ने दो दलीलें दीं । प्रथमत:, उन्होंने यह निवेदन किया कि पंचाट संख्या 3 में दिए गए निष्कर्ष कि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण

विलंब के लिए दायी था, वर्तमान कार्यवाहियों पर भी बाध्यकारी होगा । द्वितीयत:, अन्यथा रूप से भी विलंब स्पष्टत: भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा कारित किया गया था और ठेकेदार उक्त विलंब के कारण वहन की गई हानियों के लिए दरों को बढ़ाए जाने/प्रतिकर का हकदार है । उन्होंने यह निवेदन किया कि अभियंता की नियुक्ति और कार्यस्थल सुपुर्द किए जाने में विलंब कारित किया गया था और देयों के असंदाय, विभिन्न प्रकार के आदेश प्रस्तुत किए जाने, जिनको ठेकेदार द्वारा निष्पादित किया जाना था, ठेकेदार को समय का विस्तार प्रदान न किए जाने और विवाद निस्तारण बोर्ड गठित किए जाने में चूक/विलंब के कारण कारित विलंब कारित हुआ था ।

20. दावा संख्या 1 के संबंध में पंचाट संख्या 2 में माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा निकाले गए निष्कर्ष यह हैं कि निर्माण कार्य के दौरान अनिश्चितताओं और विलंबों के बाबत परिणाम के स्वयमेव संविदा में उपबंधित हैं । जहां तक किसी नुकसान/प्रतिकर, जिनके लिए ठेकेदार 1872 के भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 55 के अधीन दावे का हकदार है, का संबंध है, वह पंचाट संख्या 1 द्वारा आच्छादित पाया गया, जिसके अंतर्गत ठेकेदार के पक्ष में दावा 2.1 और 2.2 के बाबत 5.18 करोड़ रुपए और 1.85 करोड़ रुपए का अधिनिर्णय पारित किया गया था । विद्वान् वरिष्ठ काउंसेल श्री मार्कंडेय का निवेदन यह है कि माध्यस्थम् अधिकरण इस दावे के संबंध में इस बाबत भ्रमित हो गया था, कि दावा भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 55 के अधीन पंचाट है जबकि वास्तव में दावा संख्या 1 धारा 55 के अधीन आने वाला दावा नहीं था ।

21. श्री मार्कंडेय द्वारा आगे दलील दी गई कि पंचाट संख्या 3 में इस बाबत स्पष्ट निष्कर्ष अभिलिखित था कि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा विभिन्न आधारों पर विलंब कारित किए थे और इसलिए पंचाट संख्या 3 में अभिलिखित निष्कर्षों को दृष्टि में रखते हुए इस दावे को स्वयमेव ही मंजूर कर लिया जाना चाहिए था । यह दलील देने के प्रयोजनार्थ द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा पारित अल्पसंख्यक पंचाट का अवलंब लिया गया कि अल्पसंख्यक पंचाट

स्पष्टत: भारतीय संविदा अधिनियम की धारा 55 और धारा 73 के अधीन संदेय प्रतिकर के मध्य विभेद करता है । उन्होंने इस न्यायालय से अनुरोध किया कि अल्पसंख्यक पंचाट, जिसके अधीन ठेकेदार के पक्ष में निम्नलिखित रकम का अधिनिर्णय पारित किया गया है, को मान्य ठहराया जाए :-

"परिणामस्वरूप निम्नलिखित शब्दों में पंचाट पारित किया जाएगा -

(1) प्रत्यर्थी को निर्देशित किया जाता है कि वह दावेदार को बी. ओ. क्यू. प्रविष्टि 4.02(बी.) के अंतर्गत निष्पादित ट्रैक कोट के कार्य के बाबत 49,17,00,822/- रुपए की राशि का संदाय तारीख 22 अक्तूबर, 2007 से संदाय की तारीख तक 32,97,36,489/- रुपए की रकम पर 18 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से पश्चात्वर्ती ब्याज के साथ करे ।

(2) दावेदार इस बाबत घोषणा के अनुतोष का हकदार है कि दावेदार बी. ओ. क्यू. प्रविष्टि 4.02(बी.) के अंतर्गत आने वाले ट्रैक कोट के कार्य, जब वह कार्य 400/- रुपए प्रतिवर्ग मीटर की दर से निष्पादित किया जाए, के अधिशेष के बाबत संदाय का हकदार है ।

(3) प्रत्यर्थी को दावेदार को सामग्री, श्रम, का इंतजाम इत्यादि की बढ़ी हुई लागत पर उपगत अतिरिक्त व्यय के कारण हुई हानि के बाबत 1456.83/- लाख रुपए का संदाय दावे की तारीख अर्थात् 1 फरवरी, 2005 से संदाय की तारीख तक 12 प्रतिशत प्रतिवर्ष ब्याज के साथ करने के लिए निर्देशित किया जाता है ।

(4) भविष्य की अवधि के लिए प्रतिकर के रूप में याचित घोषणा का अनुतोष और उस अवधि के दौरान निष्पादित अधिशेष कार्य के बाबत भविष्य में मामला प्रस्तुत करने का विकल्प बना रहेगा ।

और

(5) दोनों पक्ष वर्तमान कार्यवाहियों में अपनी-अपनी संपूर्ण लागत वहन करेंगे ।"

22. इसके विपरीत, भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण की तरफ से उपस्थित विद्वान् काउंसेल सुश्री पद्माप्रिया ने निवेदन किया कि पंचाट संख्या 2 विस्तारपूर्वक पारित किया गया है । ठेकेदार को माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष अनेक अवसर प्रदान किए गए थे और वह दोनों ही आधारों पर हार चुका है । जब बहुसंख्यक पंचाट के द्वारा ठेकेदार के दावे को अस्वीकृत किया जा चुका है, तो अल्पसंख्यक पंचाट से किसी उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती । विद्वान् काउंसेल ने आगे निवेदन किया कि इस बाबत कोई भी कारण उत्पन्न नहीं हुआ कि इस दावे को निदेश में सम्मिलित क्यों नहीं किया गया जिससे कि इस दावे पर भी पंचाट पारित हो जाता । उनके अनुसार यह दावा बाधित है । विद्वान् काउंसेल द्वारा आगे निवेदन किया गया कि वास्तव में बढ़ोतरी खंड 70.3 के अधीन प्रदान की गई है । उन्होंने आगे निवेदन किया कि विवाद निस्तारण बोर्ड और द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा निकाले गए निष्कर्ष एक दूसरे के संगत हैं और इसलिए याचिका खारिज किए जाने योग्य है ।

विश्लेषण और निष्कर्ष

23. ऊपर उल्लिखित तथ्यों के क्रम से यह दर्शित होता है कि पक्षों ने तीन माध्यस्थम् अधिकरण नियुक्त किए थे, जिन्होंने विभिन्न विवादों और दावों का न्यायनिर्णयन किया । इन माध्यस्थम् अधिकरणों द्वारा तीन पंचाट पारित किए गए । पंचाट संख्या 1 और 3 को अंतिमता प्राप्त हो चुकी है । इस याचिका में पंचाट संख्या 2 को चुनौती दी गई है । ठेकेदार का निवेदन यह है कि पंचाट संख्या 3 में दिए गए निष्कर्ष का अवलंब पंचाट संख्या 2 को अपास्त किए जाने के प्रयोजनार्थ लिया जाए । अब प्रश्न यह उद्भूत होता है कि क्या ठेकेदार के लिए यह अनुज्ञेय है कि वह पंचाट संख्या 3 में निकाले गए निष्कर्षों को यह दलील देने के प्रयोजनार्थ तोड़े मरोड़े कि पंचाट संख्या 2 को अपास्त किया जाना चाहिए और ठेकेदार के दावे को मंजूर किया जाना चाहिए । पंचाट संख्या 2 को दी गई चुनौती पर विचार किए जाने के पूर्व अनेक माध्यस्थमों

और अनेक पंचाटों पर विधिक स्थिति का विश्लेषण किए जाने की आवश्यकता है ।

24. 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम के उपबंधों के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि माध्यस्थम् विवादों को विभिन्न चरणों में उठाया जा सकता है और किसी एकल संविदा के संबंध में अनेक माध्यस्थम् हो सकते हैं । उदाहरणस्वरूप धारा 7(1), 8(3) और 21 का परिशीलन किया जा सकता है, जो इस प्रकार हैं :-

"7. **माध्यस्थम् करार** - (i) इस भाग में 'माध्यस्थम् करार' से पक्षकारों द्वारा ऐसे सभी या कतिपय विवाद माध्यस्थम् के लिए निवेदित करने के लिए किया गया करार अभिप्रेत है, जो परिनिश्चित विधिक संबंध, चाहे संविदात्मक हो या न हो, की बाबत उनके बीच उद्भूत हुए हों या हो सकते हों ।

8. जहां माध्यस्थम् करार हो, वहां माध्यस्थम् के लिए पक्षकारों को निर्दिष्ट करने की शक्ति –

(1) *** *** ***

(2) *** *** ***

(3) इस बात के होते हुए भी कि उपधारा (1) के अधीन कोई आवेदन किया गया है और यह कि विवाद न्यायिक प्राधिकारी के समक्ष लंबित हैं, माध्यस्थम् प्रारंभ किया जा सकता है या चालू रखा जा सकता है और कोई माध्यस्थम् पंचाट दिया जा सकता है ।

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

21. **माध्यस्थम् कार्यवाहियों का प्रारंभ** - जब तक कि पक्षकारों द्वारा अन्यथा करार न किया गया हो, किसी विशिष्ट विवाद के संबंध में माध्यस्थम् कार्यवाहियां उस तारीख को प्रारंभ होंगी, जिसको उस विवाद को माध्यस्थम् को निर्देशित करने के लिए अनुरोध प्रत्यर्थी द्वारा प्राप्त किया जाता है ।"

25. धारा 7 के अधीन माध्यस्थम् के लिए करार सभी या कतिपय

विवादों, जो उद्भूत हो चुके हैं या उद्भूत हो सकते हैं, के बाबत हो सकता है । 'सभी या कतिपय विवाद, जो उद्भूत हो चुके हैं या उद्भूत हो सकते हैं' । धारा 8 के अधीन यदि कोई विशिष्ट कार्यवाही किसी न्यायालय में लंबित है और इस बाबत विवाद लंबित है कि क्या किसी विशिष्ट विवाद पर अन्य विवादों के बाबत माध्यस्थम् किया जा सकता है, तो माध्यस्थम् आरंभ किया जा सकता है या पहले से चल रही माध्यस्थम् कार्यवाई को चालू रखा जा सकता है और यहां तक कि पंचाट भी पारित किया जा सकता है । इसका अर्थ यह है कि यदि न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि प्रथम निदेश के लंबित रहने या समाप्त हो जाने के पश्चात् विवाद माध्यस्थम् योग्य है, तो द्वितीय निदेश किया जा सकता है । धारा 21 के अधीन कार्यवाहियों के आरंभ का अर्थान्वयन किसी विशिष्ट विवाद के संबंध में किया जाना चाहिए । अतः, यदि अनेक विवाद उद्भूत हो गए हैं, जो विभिन्न अवसरों पर उठाए गए हैं, तो कार्यवाहियों अर्थात् प्रत्येक विवाद का आरंभ भी भिन्न होगा । यह सभी उपबंध-दर्शित करते हैं कि अनेक प्रक्रमों पर अनेक दावे और अनेक निर्देश हो सकते हैं ।

26. अतः, किसी संविदा या किसी परियोजना के विभिन्न प्रक्रमों पर विभिन्न दावे फाइल किया जाना विधि में अनुज्ञेय है, चूंकि संविदाएं लंबी अवधि की हो सकती हैं और पक्षकार कतिपय विवादों, जब कभी भी वे उद्भूत हों, के न्यायनिर्णयन की ईप्सा कर सकते हैं । इस आज्ञा के बावजूद मुकदमों की गुणज़ता से बचा जाना चाहिए, जैसाकि इसमें इसके पश्चात् चर्चा की गई है ।

27. सिविल प्रकृति की मुकदमेबाजी के क्षेत्र में न्यायालय का प्रयास सदैव ही इस बात को सुनिश्चित करना होता है कि पक्षों के दावों का न्यायनिर्णयन एक साथ हो या यदि उन दावों में एक दूसरे के ऊपर अभिभावी हो जाने वाले विवाद्यक अंतर्वलित हों तो पश्चात्वर्ती वाद को स्थगित कर दिया जाए जब तक कि प्रथम वाद में विनिश्चय नहीं हो जाता । यह वादों की गुणज़ता से बचने के आशय से किया जाता है, जैसाकि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2 नियम 2 और धारा 10 में सिद्धांतों द्वारा प्रतिष्ठापित है और पूर्व न्याय (Res Judicata) का

सिद्धांत तो अनादिकाल से सिविल प्रक्रिया संहिता का भाग रहा है । तथापि, चूंकि माध्यस्थम् कार्यवाहियां कड़ाईपूर्वक 1908 की सिविल प्रक्रिया संहिता द्वारा शासित नहीं होती, इसलिए पक्षों के लिए यह संभव है कि जब कभी भी विवाद उद्भूत हों, वे माध्यस्थम् का अवलंब ले, किंतु क्या ऐसा किया जाना बिना किसी परिसीमा के और लोकनीति के सिद्धांतों का अनदेखा किए जाने के द्वारा, जैसाकि इन उपबंधों में प्रतिष्ठापित है, संभव होना चाहिए ।

28. एक ही संविदा के संबंध में विभिन्न माध्यस्थम् अभिकरणों के समक्ष अनेक माध्यस्थमों के कारण अत्यधिक भ्रम की स्थिति उत्पन्न होने की संभावना होती है । एक ही संविदा के संबंध में अनेक अधिकरणों का गठन संपूर्ण माध्यस्थम् प्रक्रिया को विफल कर देगा, चूंकि माध्यस्थम् का उद्देश्य विवादों का तीव्र गति के साथ समाधान करना होता है और अनेक अधिकरणों का गठन अंतर्निहित रूप से विपरीत परिणाम देने वाला होता है ।

29. विशिष्टतया, निर्माण संविदाओं में दावे बड़ी संख्या में हो सकते हैं किंतु संविदा के भंग, संविदा के अंतर्गत कार्य में विलंब, संविदा के समापन इत्यादि के बाबत अंतर्निहित विवाद लगभग सभी दावों के संबंध में मुख्य विवाद के स्वरूप के होते हैं । जैसाकि वर्तमान मामले में देखा गया है, पक्षों ने तीन बार माध्यस्थम् का अवलंब लिया तीन विभिन्न अधिकरणों के समक्ष विभिन्न दावे प्रस्तुत किए, जिनमें तीन पृथक्-पृथक् पंचाट पारित किए गए । इस बात पर विचार करते हुए कि पूर्व में नियुक्त अधिकरण समान संहिता के अधीन पक्षों के मध्य विवादों का निर्णय करने से विरत हो गया था, तीन भिन्न अधिकरणों का गठन अवांछित और अस्पष्ट था । एक ऐसी स्थिति, जिसमें अनेक माध्यस्थम् अधिकरणों ने समान संविदा के अधीन समान पक्षों के मध्य उद्भूत विभिन्न दावों का समानांतर रूप से न्यायनिर्णय किया हो, विशेष रूप से एक दूसरे पर व्याप्त होने वाले विवाद्यकों के संबंध में, स्पष्टत: बचा जाना चाहिए ।

30. एक ही संविदा के संबंध में अनेक माध्यस्थम् विभिन्न कोटियों के अंतर्गत हो सकते हैं :–

(i) समान संविदा के अंतर्गत समान पक्षों के मध्य माध्यस्थम् और कार्यवाहियां ।

(ii) समान पक्षों के मध्य माध्यस्थम् और कार्यवाहियों, जो संविदाओं के एक ही समुच्चय से उद्भूत होते हैं और एक ही श्रृंखला को गठित करती है, और जो उनको एकल विधिक संबंध में बांध देती हैं ।

(iii) अस्तित्वों के एक ही समुच्चय के मध्य समरूप या समान संविदाओं से उद्भूत होने वाले माध्यस्थम् और कार्यवाहियां की, जिनमें से एक अस्तित्व समान हैं ।

31. कोटि (i) के अंतर्गत आने वाले मामलों, जिनमें विवादों के न्यायनिर्णयन के प्रयोजनार्थ 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11 के अधीन द्वितीय निदेश ईप्सा है, में उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों ने समान संविदा के अंतर्गत समान पक्षों के मध्य उद्भूत होने वाले विवादों को माध्यस्थम् को निर्दिष्ट किया है । **इंडियन आयल कारपोरेशन** बनाम **एस. पी. एस. इंजीनियरिंग कंपनी लिमिटेड**[1] वाले मामले में अधिशेष कार्य के जोखिम वाले भाग के निष्पादन के संबंध में, दावा जिसको प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण को निर्दिष्ट नहीं किया गया था, को माध्यस्थम् के लिए निर्दिष्ट किया गया । **सैम इंडिया ब्युल्ट वेल (प्राइवेट) लिमिटेड** बनाम **भारत संघ और अन्य** [2017 की माध्यस्थम् याचिका संख्या 106, जिसे तारीख 8 सितंबर, 2017 को निर्णीत किया गया], **पारस्वनाथ डेवलपर्स लिमिटेड और अन्य** बनाम **रेल भूमि विकास प्राधिकरण** [2018 की माध्यस्थम् याचिका संख्या 724, जिसे तारीख 31 अक्तूबर, 2018 को निर्णीत किया गया], **पारस्वनाथ डेवलपर्स लिमिटेड और अन्य** बनाम **रेल भूमि विकास प्राधिकरण** [2019 की माध्यस्थम् याचिका संख्या 710 जिसे तारीख 19 मई, 2020 को निर्णीत किया गया] वाले मामलों में इसी स्थिति पर विचार किया गया ।

32. विभिन्न खानपान भोजन प्रबंधकों और भारतीय रेलवे कैटरिंग एंड टूरिज्म कारपोरेशन लिमिटेड, को अंतर्वलित करने वाली याचिकाओं

---

[1] (2011) 3 एस. सी. सी. 507 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 987.

[माध्यस्थम्, पृष्ठ 745-51/2019, माध्यस्थम् पृष्ठ 753/2019 माध्यस्थम् पृष्ठ 755-61/2019, माध्यस्थम् पृष्ठ 763/2019, माध्यस्थम् पृष्ठ 765-70/2019, माध्यस्थम् पृष्ठ 780/2019, मध्यस्थम् पृष्ठ 789/2019 और माध्यस्थम् पृष्ठ 797/2019 (आई. आर. सी. टी. सी. केसेज़)], जिसमें 25 याचिकाएं अंतर्वलित थीं और जो उपरोक्त कोटि (iii) के अंतर्गत आती हैं, में दिल्ली उच्च न्यायालय ने विवादों के न्यायनिर्णयन के लिए नवीनतम रूप से एकल मध्यस्थ की नियुक्ति की है ।

33. तथापि, जो बात अनिश्चितता और भ्रम की स्थिति उत्पन्न कर सकती है और जिससे बचा जाना चाहिए, समान संविदा के संबंध में पृथक् दावों के लिए प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण का गठन है, विशेष रूप से जब प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण वर्तमान विवाद के न्यायनिर्णयन से विरत है या वर्तमान में अधिशेष दावों के न्यायनिर्णयन के लिए उपलब्ध है । माननीय उच्चतम न्यायालय ने **डॉल्फिन ड्रिलिंग लिमिटेड** बनाम **तेल और प्राकृतिक गैस आयोग**[1] वाले मामले में इस प्रश्न पर विचार करते हुए कि क्या माध्यस्थम् के लिए द्वितीय निदेश किया जाना चाहिए, निम्नलिखित मताभिव्यक्ति की :-

> "5. प्रत्यर्थी द्वारा किया गया अभिवाक् एक वास्तविक समस्या के संबंध में उठाई गई आवाज है । यह दुर्भाग्यपूर्ण है कि इस देश में माध्यस्थम् विवादों के निस्तारण के लिए अत्यधिक खर्चीला और समय का प्रयोग करने वाला माध्यम साबित हुआ है । किंतु जैसाकि सुझाव प्रत्यर्थी द्वारा दिया गया है उस आधार पर करार में माध्यस्थम् खंड को पढ़ा जाना कठिन है, । ....
>
> 6. प्रत्यर्थी का अभिवाक् 'समस्त विवाद' शब्दों पर आधारित है, जो करार के पैरा 28.3 में उपस्थित हैं । श्री अग्रवाल ने निवेदन किया कि इन दोनों शब्दों को 'करार के अंतर्गत समस्त विवादों' के अर्थ में समझा जाना चाहिए, जो पक्षों के मध्य करार के अस्तित्व में बने रहने की अवधि के दौरान उद्भूत हो सकते हैं । तथापि,

[1] ए. आई. आर. 2010 एस. सी. 1296.

उनके पास इस बात का कोई उत्तर नहीं है कि ऐसे विवादों का क्या होगा, जो संविदा की पूर्ववर्ती अवधि के दौरान उद्भूत हुए हों और संविदा की समाप्ति पर 'समस्त विवादों' को निर्दिष्ट किए जाने का समय आने तक परिसीमा द्वारा बाधित हो गए हों । करार के खंड 28.3 में 'समस्त विवादों' शब्दों का अर्थ मात्र ऐसे 'समस्त विवादों' से हो सकता है, जो उस समय विद्यमान हैं जब माध्यस्थम् खंड का अवलंब लिया गया है और करार के पक्षों में से एक पक्ष दूसरे पक्ष को माध्यस्थम् की सूचना देता है । करार के खंड 28 के वर्तमान स्वरूप में यह नहीं कहा जा सकता कि यह एक ही बार में अपनाया जाने वाला उपाय है और यह अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता कि यदि एक बार माध्यस्थम् खंड का अवलंब लिया जा चुका है, तो माध्यस्थम् का अनुतोष अन्य विवादों, जो भविष्य में उद्भूत हो सकते हैं, के संबंध में उपलब्ध नहीं होगा ।"

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

34. उच्चतम न्यायालय द्वारा निकाले गए उपरोक्त निष्कर्ष के परिशीलन से यह स्पष्टतः दर्शित होता है कि उच्चतम न्यायालय ने विवाद के निपटारे के प्रयोजनार्थ माध्यस्थम् प्रक्रिया के अत्यधिक खर्चीली और समय व्यर्थ करने वाली प्रक्रिया होने के बाबत अपनी अप्रसन्नता व्यक्त कर दी है । उच्चतम न्यायालय ने उक्त मामले में खंड की शब्द रचना को ध्यान में रखते हुए पक्षों को द्वितीय बार माध्यस्थम् को निर्दिष्ट किया था । **डॉल्फिन** (उपरोक्त) वाले मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब लेते हुए और इस निर्णय को सावधानीपूर्वक पढ़ते हुए जो विनिश्चयानुपात हमारे समक्ष उपस्थित होता है, वह यह है कि उन सभी विवादों, जो माध्यस्थम् खंड का अवलंब लिए जाते समय विद्यमान हैं, को उठाया जाना चाहिए और एक साथ निर्दिष्ट किया जाना चाहिए । यद्यपि इसमें कोई संदेह नहीं कि किसी मामले में अनेक माध्यस्थम् अनुज्ञेय होते हैं, किंतु फिर भी यह लोक नीति के सर्वथा विरुद्ध होगा कि पक्षों को उनकी सुविधा के अनुसार दावे प्रस्तुत करने की अनुज्ञा प्रदान की जाए । यद्यपि सिविल प्रक्रिया संहिता के उपबंध माध्यस्थम् कार्यवाहियों पर कड़ाईपूर्वक लागू नहीं होते, किंतु फिर भी उच्चतम

न्यायालय द्वारा **डॉल्फिन** (उपरोक्त) वाले मामले में की गई मताभिव्यक्तियां यह दर्शित करती हैं कि जब किसी माध्यस्थम् खंड का अवलंब लिया जाता है, तो वे समस्त विवाद, जो माध्यस्थम् का अवलंब लिए जाते समय विद्यमान होते हैं, को एक साथ निर्दिष्ट किया जाना चाहिए और उनका न्यायनिर्णयन भी एक साथ किया जाना चाहिए । यह संभव है कि बाद में विवाद उत्पन्न हो जाएं, जिनके निस्तारण के लिए द्वितीय निर्देश अपेक्षित हो, तथापि, यदि कोई पक्ष कोई दावा प्रस्तुत नहीं करता, जो अवलंब लिए जाने की तारीख पर विद्यमान हो, तो उस विवाद को बाद में उठाने की अनुज्ञा प्रदान नहीं की जाएगी, जब तक कि इसके विधि अनुसार मान्य ठहराए जाने योग्य आधार न हो । यह इस बात को सुनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ आवश्यक है कि माध्यस्थम् कार्यवाहियों में निश्चितता होती है और इसलिए पक्षों द्वारा माध्यस्थम् के अनुतोष का दुरुपयोग नहीं किया जाना चाहिए । पृथक्-पृथक् माध्यस्थम् अधिकरणों का गठन एक रिष्टि है, जिससे बचा जाना चाहिए क्योंकि यह संभव है कि पक्षों के आशय सद्भाविक न हों ।

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

35. **के. वी. जार्ज** बनाम **सचिव, जल और शक्ति विभाग, त्रिवेंद्रम और अन्य**[1] वाले मामले में यह सिद्धांत सुस्थापित हो चुका है कि माध्यस्थम् कार्यवाहियों पर पूर्व आदेश का सिद्धांत लागू होता है । **डाल्फिन** (उपरोक्त) वाले मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई मताभिव्यक्ति से भी यह स्पष्टत: दर्शित होता है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 के सदृश्य सिद्धांत माध्यस्थम् कार्यवाहियों पर भी लागू होते हैं । यह विवाद्यक कि क्या कोई दावा सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 के अधीन बाधित है या क्या कोई दावा पूर्व न्याय के सिद्धांत द्वारा बाधित है, का न्यायनिर्णयन माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा किया जाना होता है, न्यायालय द्वारा नहीं । (**इंडियन आयल कारपोरेशन** बनाम **एस. पी. एस. इंजीनियरिंग कंपनी लिमिटेड**[2],

[1] ए. आई. आर. 1990 एस. सी. 53.

[2] (2011) 3 एस. सी. सी. 507 = ए. आई. आर. 2011 एस. सी. 987.

सैम इंडिया ब्युल्ट वेल (प्राइवेट) लिमिटेड (उपरोक्त) **पारस्वनाथ डेवलपर्स लिमिटेड और अन्य** बनाम **रेल भूमि विकास प्राधिकरण** (उपरोक्त), **पारस्वनाथ डेवलपर्स लिमिटेड और अन्य** बनाम **रेल भूमि विकास प्राधिकरण** (उपरोक्त) वाले मामले) । व्यापक सिद्धांतों, जिनको सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 2, नियम 2 और साथ ही सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 10 और 11, जो स्वयमेव ही भारत में न्यायनिर्णयन की प्रक्रिया की लोकनीति में अंतर्निहित है, को ध्यान में रखते हुए यह अननुज्ञेय होगा कि इस प्रक्रम पर उठाए जाने वाले दावों को मंजूर किया जाए और अनेक माध्यस्थम् अधिकरणों को निर्दिष्ट किया जाए, जिनमें कभी-कभी कार्यवाहियों की गुणजता और साथ ही परस्पर विरोधी पंचाटों का परिणाम भी सामने आ जाए । अत: इस न्यायालय की सुविचारित राय है कि :–

(i) किसी विशिष्ट संविदा या संविदाओं की श्रृंखला, जो पक्षों को विधिक संबंध में बांधती हैं, के संबंध में सदैव यह प्रयास होना चाहिए कि एक माध्यस्थम् अधिकरण को एक ही निदेश किया जाए । **डॉल्फिन** (उपरोक्त) मामले के पैरा 9 में माननीय उच्चतम न्यायालय (न्यायमूर्ति आफताब आलम) द्वारा जो समाधान प्रस्तावित किया गया, वह यह था कि क्या माध्यस्थम् खंडों को ऐसी रीति में प्रारूपित किया जाए ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि सभी दावे एक ही बार में निर्दिष्ट किए जा सकें और कोई भी दावा परिसीमा द्वारा बाधित न हो, इस बात को ध्यान में रखा जाना चाहिए । **डॉल्फिन** (उपरोक्त) वाले मामले में की गई मताभिव्यक्ति इस प्रकार है –

'9. वास्तव में माध्यस्थम् कार्यवाहियों द्वारा कारित वित्तीय बोझ का विवाद्यक विधिसम्मत चिंता का विषय है, किंतु इस समस्या का परिहार केवल माध्यस्थम् खंड को उपयुक्त रीति में संशोधित किए जाने के द्वारा ही किया जा सकता है । भविष्य में होने वाले करारों में माध्यस्थम् खंड को इस प्रकार से प्रारूपित किया जा सकता है, जिससे यह

स्पष्ट हो सके कि माध्यस्थम् के अनुतोष का आश्रय केवल एक बार तभी लिया जा सकता है, जब करार के अधीन कार्य समाप्त हो चुका हो या करार की समाप्ति/रद्दकरण के समय और तत्समय अभिव्यक्त रूप से किसी विवाद/दावे को पुराने या समय बाधित इत्यादि होने और मात्र इस कारणवश मामले के माध्यस्थम् योग्य न रह जाने से बचाने के लिए ।'

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

(ii) यदि किसी संविदा के अधीन विवाद उद्भूत हो गए हैं और माध्यस्थम् खंड का अवलंब विभिन्न प्रक्रमों पर लिया जा चुका है, तो माध्यस्थम् का अवलंब लेने वाले पक्ष को सभी दावे, जो माध्यस्थम् के निदेश का अवलंब लिए जाने की तारीख पर पहले ही उद्भूत हो चुके हैं, उठाने चाहिए । किसी विपक्ष के लिए यह अनुज्ञेय नहीं होगा कि वह केवल कुछ विवादों को निर्दिष्ट करे, जो उद्भूत हो चुके हैं और सभी को नहीं । यदि माध्यस्थम् का अवलंब लिए जाने की तारीख पर कोई विवाद और उसके अंतर्गत कोई दावा उद्भूत हो चुका है और उसका उल्लेख नहीं किया गया है, तो या तो उस दावे को अवलंब लिए जाने वाले पत्र में या संदर्भ की शर्तों में बाधित/अधित्यजित अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए, जब तक कि माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा उसको उठाए जाने की अनुज्ञा किसी विधित: न्यायोचित/मान्य ठहराए जाने योग्य कारणवश प्रदान न कर दी जाए ।

(iii) यदि कोई माध्यस्थम् अधिकरण किसी विशिष्ट संविदा या संविदाओं की श्रृंखला के अधीन कुछ विवादों का न्यायनिर्णयन किए जाने के लिए गठित किया जाता है, तो कोई भी भविष्य का विवाद, जो समान संविदा या करारों की एक ही श्रृंखला के संबंध में उद्भूत होते हैं, सामान्यत: एक ही अधिकरण को निर्दिष्ट किया जाना चाहिए । माध्यस्थम् अधिकरण अनेक निदेशों के संबंध में पृथक्-पृथक् पंचाट उद्घोषित कर सकता है, तथापि, चूंकि अधिकरण एक ही होगा, इसलिए परस्पर विरोधी और सुलह सफाई न किए जाने योग्य पंचाट पारित किए जाने की संभाव्यता से बचा जाना चाहिए ।

(iv) विभिन्न पक्षों और एक ही संगठन को अंतर्वलित करने वाली कोटि (iii) से संबंधित मामले, जिनमें सामान्य/एक दूसरे पर अभिभावी होने वाले विवाद्यक उद्भूत हो गए हो, एक ही अधिकरण गठित किए जाने का प्रयास किया जाना चाहिए, जैसाकि **आई.आर.सी.टी.सी.** (उपरोक्त) वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया है । तथापि, यदि ऐसा किया जाना संभव न हो, तो कम से कम पारित किए गए पंचाट को दी गई चुनौतियों को एक साथ सुना जाना चाहिए, यदि वे एक ही न्यायालय के समक्ष लंबित हों ।

(v) पक्षों द्वारा 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 11 या धारा 34 या किसी अन्य उपबंध के अधीन याचिकाएं फाइल किए जाते समय विनिर्दिष्ट प्रकटीकरण किए जाने चाहिए, जैसेकि माध्यस्थम् निदेशों की संख्या, समान संविदा के संबंध में माध्यस्थम् अधिकरणों या न्यायालयों के समक्ष लंबित या न्यायनिर्णीत कार्यवाहियों और यदि ऐसा है, तो उक्त कार्यवाहियों का प्रक्रम ।

(vi) यदि एक ही संविदा से उद्भूत होने वाले पंचाटों के संबंध में अनेक चुनौतियां लंबित हैं, तो पक्षों को उनके बारे में उस न्यायालय को जानकारी देनी चाहिए, जिसके समक्ष कोई विशिष्ट चुनौती का न्यायनिर्णयन किया जा रहा है ताकि सभी चुनौतियों का न्यायनिर्णयन एक ही बार में विस्तारपूर्वक किया जा सके । इससे उस स्थिति से बचा जाना सुनिश्चित हो सकेगा, जो वर्तमान मामले में उद्भूत हो गई है, जिसमें पंचाट संख्या 1 और 3 को अंतिमता प्राप्त हो चुकी है और पंचाट संख्या 2 को दी गई चुनौती न्यायालय के समक्ष लंबित है ।

36. पुनः तथ्यों पर विचार करते हुए, तारीखों के परिशीलन से ये प्रकट होता है कि पंचाट संख्या 1 तारीख 5 अक्तूबर, 2007 को पारित किया गया था और ठेकेदार ने अन्य बातों के साथ-साथ 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 34 के अधीन दावा 2.3 के अस्वीकरण को चुनौती दी थी । ठेकेदार ने इसके समानांतर 2007 में कुछ अन्य दावों के संबंध में माध्यस्थम् का अवलंब लिया था । अतः, जब पंचाट संख्या 1 को दी गई चुनौती लंबित थी, तब दावा 2.3 के

अस्वीकरण को सम्मिलित करते हुए द्वितीय माध्यस्थम् में कार्रवाई चल रही थी । तत्पश्चात् ठेकेदार ने 2009 में द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष दावा 2.3 का विरोध करने की न्यायालय से अनुज्ञा की ईप्सा की, जो उसको भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा फाइल किए गए आक्षेपों पर विचार किए जाने के अनुकल्प के अधीन प्रदान कर दी गई । समस्या का समाधान यहीं पर नहीं हुआ । तत्पश्चात्, ठेकेदार ने परिसमापन नुकसानी के रूप में संगृहीत रकम की वसूली के संबंध में अन्य दावों के साथ-साथ तारीख 23 दिसंबर, 2008 को तृतीय माध्यस्थम् का अवलंब लिया । पंचाट संख्या 2 तारीख 21 फरवरी, 2011 अर्थात् जब तृतीय माध्यस्थम् विचारार्थ लंबित था, को पारित किया गया था । वर्तमान मूल प्रकीर्ण याचिका अगस्त, 2011 में फाइल की गई थी । तारीख 20 सितंबर, 2011 के आदेश में यह अवेक्षित किया गया कि तृतीय माध्यस्थम् की कार्यवाही अभी लंबित है । तृतीय माध्यस्थम् अधिकरण ने अपनी कार्यवाही समाप्त की और तारीख 20 फरवरी, 2012 को पंचाट पारित कर दिया । उक्त पंचाट को तारीख 14 अगस्त, 2013 को अंतिमता प्राप्त हो गई । भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ने भी अभिकथित रूप से इस पंचाट के अंतर्गत अधिनिर्णीत रकम का संदाय कर दिया है ।

37. अब जबकि पंचाट संख्या 1 और 3 को अंतिमता प्राप्त हो चुकी है, पंचाट संख्या 2 के संबंध में चुनौती अर्थात् वर्तमान याचिका अभी लंबित है । यह संभव है कि पक्ष न्यायालय के संज्ञान में इस बात को न लाए हों कि पंचाट संख्या 3 से उद्भूत होने वाली 2012 की मूल प्रकीण याचिका संख्या 584 निर्णीत हो चुकी है और पंचाट संख्या 2 से संबंधित मूल प्रकीर्ण याचिका न्यायालय के समक्ष लंबित है ।

38. यही वह पृष्ठभूमि है, जिसमें न्यायालय को ठेकेदार की ओर से किए गए निवेदनों पर विचार करना है कि पंचाट संख्या 3 में निकाले गए निष्कर्षों को वर्तमान याचिका को निर्णीत किए जाने के प्रयोजनार्थ पढ़ा जाना है । अब जो प्रश्न उद्भूत होता है, यह है कि क्या यह अनुज्ञेय है कि किसी पश्चात्वर्ती पंचाट में निकाले गए निष्कर्षों को किसी पूर्ववर्ती पंचाट के विरुद्ध आक्षेपों को निर्णीत किए जाने के प्रयोजनार्थ पढ़ा जाए ।

39. दावा संख्या 2.3 दरों में बढ़ोतरी प्रदान न किए जाने के संबंध में प्रतिकर से संबंधित है अर्थात् करार में उपबंधित बढ़ोतरी उपबंध के परे सामग्री और श्रम की बढ़ी हुई लागत को आच्छादित किए जाने के प्रयोजनार्थ दरों के पुनरीक्षण से संबंधित । यह दावा प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष प्रस्तुत किए गए दावों में से एक था, जिसको यद्यपि प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा निम्नलिखित शब्दों में अस्वीकृत कर दिया गया था :–

"2.2.3.4 **माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा की गई मताभिव्यक्तियां और निकाले गए निष्कर्ष** :

2.2.4.1 दावेदार ने तीन उपशीर्षकों के अधीन इस दावा संख्या 2 को वरीयता दी है, जो निम्नलिखित है :

दावा 2.1 : अतिरिक्त और प्रत्याक्षित लाभ के बाबत उपगत हानियों के लिए प्रतिकर,

दावा 2.2 : योजित मशीनरी और उपकरणों के कारण घटी हुई उत्पादकता के लिए प्रतिकर,

दावा 2.3 : करार में बढ़ोतरी उपबंध (मूल्य समायोजन) के अधीन उपलब्ध अनुतोष के अतिरिक्त विस्तारित अवधि के दौरान सामग्री और श्रम की लागत को बढ़ाए जाने को आच्छादित करने वाली दरों का पुनरीक्षण ।

दावेदार ने उपदावा 2.1, 2.2 और 2.3 के अधीन तारीख 15 जनवरी, 2004 से 6 जुलाई, 2006 (सी.ए.- XV तारीख 30 अक्तूबर, 2006) की अवधि के लिए 751.48/- लाख रुपए, 1374.93/- लाख रुपए और 1406.03/- लाख रुपए के अलग-अलग प्रतिकर की मांग की । दावेदार ने इन उपदावों के संबंध में किसी घोषणात्मक पंचाट की मांग नहीं की है ।

2.2.4.2 उपरोक्त तीनों उपदावों में से उपदावा 2.3 का उल्लेख दावों की उस सूची में नहीं किया गया, जिसको माध्यस्थम्

का अवलंब लिए जाने के प्रयोजनार्थ तामील की गई तारीख 27 जनवरी, 2005 की सूचना (प्रदर्श सी.87) और जिसके पश्चात् पुन: तारीख 21 फरवरी, 2005 के पत्र (प्रदर्श सी. 89) में किया गया था । यद्‌यपि यह सूचना (प्रदर्श सी. 87) दावेदार की तारीख 25 जनवरी, 2005 की सूचना की निरंतरता में प्रत्यर्थियों के महाप्रबंधक को दी गई थी, किंतु चूंकि तारीख 27 जनवरी, 2005 का पत्र अध्यक्ष (नियोजक) को संबोधित था, अंतत: तारीख 25 जनवरी, 2005 के पत्र के ऊपर अभिभावी हो जाता है । माध्यस्थम् को आरंभ किए जाने की तारीख 27 जनवरी, 2005 की सूचना के तृतीय पैरा में जिन बातों का स्पष्टत: उल्लेख किया गया है, निम्नलिखित हैं –

> 'हम खंड 67.1 के निबंधनों के अनुसार निम्नलिखित विवाद्‌यकों/दावों के संबंध में माध्यस्थम् आरंभ किए जाने के अपने आशय की सूचना देते हैं । यहां पर दावेदार ने 9 दावे सूचीबद्ध किए हैं । ऊपर निर्दिष्ट उपदावा 2.3 इस सूची में सम्मिलित नहीं है । तारीख 6 अप्रैल, 2005 को आयोजित किए गए माध्यस्थम् अधिकरण की प्रथम बैठक में यह स्पष्ट कर दिया गया था कि वर्तमान माध्यस्थम् मात्र ठेकेदार के तारीख 27 जनवरी, 2005 और 21 फरवरी, 2005 के पत्रों में समाविष्ट दावों के संबंध में है ।
>
> अत: माध्यस्थम् अधिकरण इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि उपदावा 2.3 निदेश की शर्तों के बाहर है ।"

(बल देने के लिए रेखांकित किया गया है ।)

40. अत:, प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण का यह विचार था कि दावा 2.3 को अवलंब लिए जाने/निदेश किए जाने वाले पत्र का भाग होना चाहिए था । उक्त दावे को अवलंब लिए जाने वाले पत्र में न उठाए जाने के कारण यह अभिनिर्धारित किया गया कि वह दावा निदेश के निबंधनों के बाहर था । इसमें कोई संदेह नहीं कि इस न्यायालय ने 2009 में ठेकेदार को अनुज्ञा प्रदान की थी कि वह द्‌वितीय माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष अपने दावे को प्रस्तुत करे । तथापि, भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग

प्राधिकरण द्वारा प्रस्तुत किए गए सभी आक्षेपों पर विचार का विकल्प खुला रखा गया था । द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण आक्षेपित आदेश में इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि बढ़ोतरी खंड 70.2 के अधीन प्रदान किए जाने योग्य नहीं है और यह तथ्य भी कि प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण ने समस्त बढ़ोतरी, जो ठेकेदार को प्रदान की जानी थी, का ध्यान रखा है । माध्यस्थम् अधिकरण का तर्क यह है कि जहां तक भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा विलंब, यदि कोई हो, का संबंध है, प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण ने ठेकेदार द्वारा किए गए समस्त दावे मंजूर कर लिए हैं और आगे कोई भी दावा प्रदान किए जाने योग्य नहीं है । द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण ने विलंब के पहलू का भी विश्लेषण किया और यह निष्कर्ष निकाला कि ठेकेदार को कार्यस्थल उपलब्ध कराए जाने के पश्चात् उसको चार वर्ष का विलंब करने का विकल्प उपलब्ध था, पूर्णतः अयुक्तियुक्त है ।

41. द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा दिया गया यह तर्क कि खंड 70.2 लागत अर्थात् मूल्यों में बढ़ोतरी या कमी के लिए उपबंधित करता है । खंड 70.2 और 70.3 बढ़ोतरी प्रदान किए जाने के प्रयोजनार्थ फार्मूले के लिए उपबंधित करते हैं । उक्त खंडों को दृष्टि में रखते हुए द्वितीय माध्यस्थम् अधिकरण ने अभिनिर्धारित किया कि आगे कोई भी प्रतिकर प्रदान नहीं किया जा सकता । संविदा में बढ़ोतरी खंड में स्पष्ट रूप से फार्मूले को विनिर्दिष्ट किया गया है । यदि लागत में कोई बढ़ोतरी या कमी संविदा द्वारा आच्छादित नहीं है, तो खंड 70.2 के अनुसार संविदा में उल्लिखित ईकाई की दरें और मूल्य के बाबत यह उपधारणा की जाएगी कि उनमें समस्त आकस्मिकताएं सम्मिलित हैं । इस खंड का स्पष्ट निर्वचन यह होगा कि यदि संविदा में बढ़ोतरी को अन्यथा रूप से उपबंधित नहीं किया गया है, तो एकमात्र अनुज्ञेय बढ़ोतरी खंड 70.2 के अधीन होगी । आक्षेपित पंचाट में यह अभिलिखित किया गया है कि ठेकेदार ने अपने दावे के समर्थन में किसी साक्ष्य के लिए उपबंधित नहीं किया है । चूंकि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ने संविदा में बढ़ोतरी खंड के अनुसार पहले ही संदाय कर दिया है, आगे कोई भी बढ़ोतरी अनुज्ञेय नहीं है ।

42. अधिकरण ने पंचाट संख्या 1 में विलंब के विषय पर यह निष्कर्ष निकाला कि विलंब मात्र इस सीमा तक भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण पर आरोपित किया जा सकता है कि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा कार्यस्थल हस्तगत किए जाने में विलंब कारित किया गया था । प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण ने मताभिव्यक्ति की कि यद्यपि ठेकेदार द्वारा किया गया आरंभिक कार्य भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण द्वारा असमर्थता के कारण खंड 42.01 के अधीन बाध्यताओं को पूर्ण न किए जाने के कारण प्रभावित हो गया था, इसलिए ठेकेदार एक बार बाधाओं को हटा दिए जाने के बाद भी कार्य की प्रगति को गति प्रदान करने में असमर्थ था । तथापि, तृतीय माध्यस्थम् अधिकरण ने परिसमापन नुकसानी की वसूली के लिए फाइल किए गए दावे पर विचार करते हुए अभिलिखित किया कि भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण ने दावे के समर्थन में पर्याप्त साक्ष्य इस बाबत उपलब्ध नहीं कराए कि विलंब ठेकेदार द्वारा कारित किया गया था । इन सभी पंचाटों को अपने-अपने आधारों पर स्वतंत्र रूप से टिका रहना चाहिए । पंचाट संख्या 1 को पंचाट संख्या 2 में या पंचाट संख्या 3 को पंचाट संख्या 2 में संमिश्रित किए जाने का कोई भी प्रयास निश्चित रूप से ऐसे परिणामों की ओर ले जाएगा, जिनके बाबत कोई अनुमान नहीं लगाया जा सकता । आदर्श रूप से, चूंकि केंद्रीय विवाद्यक विलंब से संबंधित था, इसलिए प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण को समस्त दावों पर विचार करना चाहिए था । तथापि, ऐसा संभव नहीं हुआ । ये मामले 20 वर्ष पुराने हैं, चूंकि संविदा वर्ष 2000 में निष्पादित की गई थी और न्यायालय वर्तमान में भी एक संविदा से उद्भूत कार्यवाहियों की गुणज़ता में उलझी हुई है । इस बात की आवश्यकता है कि मुकदमेबाजी की इस गुणज़ता का अंत होना चाहिए । द्वितीय पंचाट स्वयमेव में ही नितांत रूप से सकारण है और संविदा के खंडों के निबंधनों के अनुसार भी है । इन सभी बातों को ध्यान में रखते हुए यह नहीं कहा जा सकता कि आक्षेपित पंचाट संख्या 2 में निकाले गए निष्कर्षों को चुनौती दी जा सकती है ।

43. ठेकेदार की तरफ से इस प्रतिपादना के समर्थन में विभिन्न

विनिश्चय उद्धृत किए गए हैं कि विलंब के कारण नुकसानों के लिए दावे और दरों में बढ़ोतरी/पुनरीक्षण के लिए दावे एक दूसरे से भिन्न हैं । दोनों ही प्रकार के दावों का न्यायनिर्णयन पृथक्-पृथक् रूप से किया जा सकता है और अनुतोष प्रदान किए जा सकते हैं । नुकसानों के लिए अनुतोष प्रदान किए जाने के कारण बढ़ोतरी के लिए फाइल किया गया दावा विफल नहीं होता । यह प्रतिपादना संदेह के घेरे में नहीं है । तथापि, वर्तमान मामले में संविदा के अनुसार दरों में बढ़ोतरी/पुनरीक्षण पहले ही प्रदान की जा चुकी है और ठेकेदार को पंचाट संख्या 1 और पंचाट संख्या 3, दोनों में विलंब के लिए प्रतिकर प्रदान किया जा चुका है । दावा संख्या 1 (प्रथम माध्यस्थम् अधिकरण के समक्ष दावा संख्या 2.3) को निम्नलिखित दो आधारों पर न्यायत: अस्वीकृत किया गया है :–

(i) यह दावा आरंभिक निदेश में सम्मिलित नहीं किया गया था, यद्यपि विवाद पहले ही आरंभ हो चुका था,

(ii) कार्यस्थल की स्पष्ट रूप से उपलब्धता के पश्चात् कारित विलंब ठेकेदार द्वारा किया गया था, और

(iii) खंड 70.2 में अनुज्ञेय बढ़ोतरी के परे कोई अन्य बढ़ोतरी प्रदान नहीं की जा सकती ।

बढ़ोतरी, जैसीकि संविदा में उपबंधित है, पहले ही प्रदान की जा चुकी है । यह तर्क त्रुटिपूर्ण नहीं है और इसमें मध्यक्षेप किए जाने की आवश्यकता नहीं है ।

44. 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 34 के अधीन फाइल की गई याचिका पर सुनवाई करते हुए यह अभिनिर्धारित किया जाना असंगत होगा कि किसी पश्चात्वर्ती पंचाट में निकाला गया निष्कर्ष पूर्ववर्ती पंचाट में निकाले गए निष्कर्ष को अवैध या विधि के विपरीत कर देगा । पंचाट का परीक्षण उस तारीख को दृष्टि में रखते हुए किया जाना चाहिए, जब उसको उसके गुणागुण के आधार पर पारित किया गया और न कि पश्चात्वर्ती निष्कर्षों के आधार पर, जिन्हें पश्चात्वर्ती माध्यस्थम् अधिकरण द्वारा निकाला जा सकता है । **विजय कालिया और अन्य** बनाम **प्रिसमियां केविल ई. सिस्टेमिक एस. आर.**

एल. और अन्य [2020 की सिविल अपील संख्या 1544, जो तारीख 13 फरवरी, 2020 को निर्णीत की गई] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस दलील को अस्वीकृत कर दिया कि चूंकि चुनौती के अंतर्गत पंचाट एक अन्य पंचाट से असंगत और परस्पर विरोधी है, वह अपास्त किए जाने योग्य है । अत:, द्‌वितीय माध्यस्थम् अधिकरण द्‌वारा निकाले गए निष्कर्ष किसी स्पष्ट अवैधता या असंगतता से ग्रसित नहीं है और 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 34 के अधीन मध्यक्षेप के लिए कोई अन्य आधार उपलब्ध नहीं है । यदि दलील के प्रयोजनार्थ तृतीय माध्यस्थम् अधिकरण द्‌वारा निकाले गए निष्कर्षों पर विचार किया जाए, तो वे निष्कर्ष परियोजना में कारित विलंब से संबंधित है और भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के परिसमापन का नुकसान अधिरोपित करने के अधिकार से संबंधित हैं । बढ़ाई गई दरों के असंदाय के लिए बढ़ोतरी या प्रतिकर पंचाट संख्या 3 की विषयवस्तु नहीं है । अत:, पंचाट संख्या 3 में समाविष्ट किसी भी निष्कर्ष को पंचाट संख्या 2 के माध्यम से ठेकेदार के पक्ष में प्रतिकर/दर पुनरीक्षण/बढ़ोतरी प्रदान किए जाने के लिए पंचाट पारित किए जाने के प्रयोजनार्थ वर्तमान याचिका में सम्मिलित या उल्लिखित नहीं किया जा सकता । अत: ठेकेदार का पक्षकथन मान्य ठहराए जाने योग्य नहीं है और अस्वीकृत किए जाने योग्य है । बहुसंख्यक मध्यस्थों द्‌वारा पंचाट पारित किए जाते समय निकाले गए निष्कर्ष स्पष्ट और संक्षिप्त हैं, उनके द्‌वारा मध्यक्षेप की परिधि अत्यंत सीमित है । अत: यह न्यायालय वर्तमान याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाती ।

45. माध्यस्थम् कार्यवाहियों में विवादों की गुणज़ता पर भी प्रभावी ढंग से यह सुनिश्चित किए जाने के प्रयोजनार्थ विचार किया जाना चाहिए कि लंबी अवधि तक चलने वाली माध्यस्थम् यात्रा, जैसाकि वर्तमान मामले में हुआ है, से बचा जाए । माध्यस्थम् के पक्षों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे माध्यस्थम् प्रक्रियाओं का प्रयोग सद्धाविक अनुशासन के साथ करें । हमको ऐसा प्रतीत होता है कि ऐसा किए जाने की स्पष्टत: आवश्यकता है । दिल्ली उच्च न्यायालय ने अधिनियम के

अधीन अनेक वृत्तिक निर्देश जारी किए हैं । ऐसा एक निर्देश तारीख 7 दिसंबर, 2009 का वृत्तिक निर्देश संख्या 16/नियम/दि.उ.न्या. है, जिसके अंतर्गत यह अपेक्षित है कि जब 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 9 के अधीन याचिकाएं फाइल की जाती हैं, तो पक्षों के लिए यह आज्ञापक हो जाता है कि वे इस बात का उल्लेख करें कि समान वाद कारण के आधार पर कोई अन्य याचिका फाइल नहीं की गई है । अधिकरणों की गुणज़ता और असंगत/परस्पर विरोधी पंचाटों से बचने के प्रयास के रूप में, जैसाकि वर्तमान मामले में घटित हुआ है, निम्नलिखित निर्देश जारी किए गए हैं :-

"(i) 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम की धारा 34 के अधीन प्रत्येक याचिका (जिसको इसमें इसके पश्चात् 'धारा 34 की याचिका' कहा गया है), न्यायालय की शरण में जाने वाले पक्षों को इस तथ्य का प्रकटीकरण करना चाहिए कि समान संविदा या संविदाओं की श्रृंखला के संबंध में कोई अन्य कार्यवाही लंबित है या उसका न्यायनिर्णयन किया गया है और यदि ऐसा किया गया है, तो उक्त कार्यवाहियां किस प्रक्रम पर हैं और वह कौन सा फोरम है जहां वे कार्यवाहियां लंबित हैं या उनका न्यायनिर्णयन किया गया है ।

(ii) उस समय बिंदु पर, जब धारा 34 के अंतर्गत किसी याचिका की सुनवाई की जाती है, तो पक्षों को इस बात का प्रकटीकरण करना होगा कि क्या समान संविदा के संबंध में धारा 34 के अधीन कोई अन्य याचिका लंबित है और यदि लंबित है, तो परस्पर विरोधी निष्कर्षों से बचने के लिए दोनों याचिकाओं के एक साथ निस्तारण की ईप्सा की जानी चाहिए ।

(iii) पक्षों को किसी माध्यस्थम् अधिकरण के मध्यस्थ/गठन की नियुक्ति की ईप्सा करते हुए फाइल की गई याचिकाओं में इस बात का प्रकटीकरण करना चाहिए कि क्या समान संविदा या संविदाओं की श्रृंखला से उद्भूत होने वाले दावों के संबंध में कोई अधिकरण पहले ही दोनों पक्षों में से किसी भी पक्ष के दावों के न्यायनिर्णयन के लिए गठित किया जा चुका है । यदि ऐसा कोई अधिकरण पहले ही गठित किया जा चुका है, तो परस्पर विरोधी या

एक दूसरे के असंगत निष्कर्षों से बचने के लिए धारा 11 के अधीन माध्यस्थम् संस्था या उच्च न्यायालय द्वारा समान अधिकरण या एकल अधिकरण को मामले को निर्दिष्ट किए जाने के प्रयास किए जा सकते हैं ।

(iv) माध्यस्थम् खंडों को समाविष्ट करने वाली संविदाओं के अंतर्गत नियुक्ति प्राधिकारी को नियुक्ति या पृथक् मध्यस्थों/माध्यस्थम् अधिकरणों के गठन से समान संविदा या संविदाओं की समान श्रृंखला से उद्भूत होने वाले विभिन्न दावों/विवादों से बचना चाहिए ।"

46. वर्तमान आदेश विद्वान् महारजिस्ट्रार को भेजा जाए ताकि वे इस आदेश को माननीय मुख्य न्यायमूर्ति के समक्ष इस बात पर विचार किए जाने के प्रयोजनार्थ प्रस्तुत कर सकें कि क्या 1996 के माध्यस्थम् और सुलह अधिनियम के अधीन विरचित दिल्ली उच्च न्यायालय नियम में कोई उपांतरण अपेक्षित हैं ।

47. वर्तमान आदेश भारत सरकार के विधि और न्याय मंत्रालय के सचिव और भारतीय राष्ट्रीय राजमार्ग प्राधिकरण के अध्यक्ष को भी भेजा जाए ।

याचिका का निपटारा किया जाए ।

शु.

संसद् के अधिनियम

स्त्री अशिष्ट रूपण (प्रतिषेध) अधिनियम, 1986

(1986 का अधिनियम संख्यांक 60)

[23 दिसम्बर, 1986]

विज्ञापनों के माध्यम से या प्रकाशनों, लेखों, रंगचित्रों, आकृतियों में या किसी अन्य रीति से स्त्रियों के अशिष्ट रूपण का प्रतिषेध करने और उससे संबंधित या उसके आनुषंगिक विषयों के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के सैंतीसवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :-

1. संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ – (1) इस अधिनियम का संक्षिप्त नाम स्त्री अशिष्ट रूपण (प्रतिषेध) अधिनियम, 1986 है ।

(2) इसका विस्तार, जम्मू-कश्मीर राज्य के सिवाय, संपूर्ण भारत पर है ।

(3) यह उस तारीख* को प्रवृत्त होगा, जो केन्द्रीय सरकार, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे ।

2 परिभाषाएं – इस अधिनियम में, जब तक कि संदर्भ से, अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "विज्ञापन" के अंतर्गत कोई सूचना, परिपत्र, लेबल, रैपर या अन्य दस्तावेज है और इसके अंतर्गत प्रकाश, ध्वनि, धुआं या गैस के माध्यम से किया गया कोई दृश्य रूपण भी है ;

---

* 2.10.1987 – देखिए अधि. सं. आ. का. नि. 821 (अ) तारीख 29.9.1987 भारत का राजपत्र असाधारण, भाग 2, खंड 3 (i) तारीख 28.9.1987 ।

(ख) "वितरण" के अंतर्गत नमूने के तौर पर, चाहे मुफ्त या अन्यथा, वितरण भी है ;

(ग) "स्त्री अशिष्ट रूपण" से किसी स्त्री की आकृति, उसके रूप या शरीर या उसके किसी अंग का, किसी ऐसी रीति से ऐसे रूप में चित्रण करना अभिप्रेत है जिसका प्रभाव अशिष्ट हो, अथवा जो स्त्रियों के लिए अपमानजनक या निन्दनीय हो, अथवा जिससे, लोक नैतिकता या नैतिक आचार के विकृत, भ्रष्ट या क्षति होने की संभावना है ;

(घ) "लेबल" से कोई लिखित, चिह्नित, स्टाम्पित, मुद्रित या चित्रित विषय-वस्तु अभिप्रेत है जो किसी पैकेज पर चिपकाई गई है या उस पर दिखाई दे रही है ;

(ङ) "पैकेज" के अन्तर्गत कोई बाक्स, कार्टन, टिन या अन्य पात्र भी है ;

(च) "विहित" से इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्‌वारा विहित अभिप्रेत है ।

3. स्त्री अशिष्ट रूपण अंतर्विष्ट करने वाले विज्ञापनों का प्रतिषेध – कोई व्यक्ति, कोई ऐसा विज्ञापन जिसमें किसी भी रूप में स्त्रियों का अशिष्ट रूपण अंतर्विष्ट है, प्रकाशित नहीं करेगा या प्रकाशित नहीं करवाएगा अथवा उसके प्रकाशन या प्रदर्शन की व्यवस्था नहीं करेगा या उसमें भाग नहीं लेगा ।

4. स्त्री अशिष्ट रूपण अंतर्विष्ट करने वाली पुस्तकों, पुस्तिकाओं, आदि के प्रकाशन या डाक द्‌वारा भेजने का प्रतिषेध – कोई व्यक्ति, कोई ऐसी पुस्तक, पुस्तिका, कागज-पत्र, स्लाइड, फिल्म, लेख, रेखाचित्र, रंगचित्र, फोटोचित्र, रूपण या आकृति का, जिसमें किसी रूप में स्त्रियों का अशिष्ट रूपण अंतर्विष्ट है, उत्पादन नहीं करेगा या उत्पादन नहीं करवाएगा, विक्रय नहीं करेगा, उसको भाड़े पर नहीं देगा, वितरित नहीं करेगा, परिचालित नहीं करेगा या डाक द्‌वारा नहीं भेजेगा :

परन्तु इस धारा की कोई बात, –

(क) किसी ऐसी पुस्तक, पुस्तिका, कागज-पत्र, स्लाइड, फिल्म, लेख, रेखाचित्र, रंगचित्र, फोटोचित्र, रूपण या आकृति को लागू नहीं होगी, –

(i) जिसका प्रकाशन लोक कल्याण के लिए होने के कारण इस आधार पर न्यायोचित साबित हो जाता है कि ऐसी पुस्तक, पुस्तिका, कागज-पत्र, स्लाइड, फिल्म, लेख, रेखाचित्र, रंगचित्र, फोटोचित्र, रूपण या आकृति विज्ञान, साहित्य, कला अथवा विद्या या सर्वसाधारण संबंधी अन्य उद्देश्यों के हित में हैं ; या

(ii) जो सद्भावपूर्वक धार्मिक प्रयोजनों के लिए रखी या उपयोग में लाई जाती है ;

(ख) किसी ऐसे रूपण को लागू नहीं होगी जो –

(i) प्राचीन संस्मारक तथा पुरातत्वीय स्थल और अवशेण अधिनियम, 1958 (1958 का 24) के अर्थ में किसी प्राचीन संस्मारक पर या उसमें ; या

(ii) किसी मंदिर पर या उसमें, या मूर्तियों के प्रवहण के उपयोग में लाए जाने वाले या किसी धार्मिक प्रयोजन के लिए रखे या उपयोग में लाए जाने वाले किसी रथ पर,

तक्षित, उत्कीर्ण, रंगचित्रित या अन्यथा रूपित है ;

(ग) किसी ऐसी फिल्म को लागू नहीं होगी जिसकी बाबत चलचित्र अधिनियम, 1952 (1952 का 37) के भाग 2 के उपबंध लागू होंगे ।

5. प्रवेश करने और तलाशी लेने की शक्तियां – (1) ऐसे नियमों के अधीन रहते हुए, जो विहित किए जाएं, राज्य सरकार द्वारा प्राधिकृत कोई राजपत्रित अधिकारी, उस क्षेत्र की स्थानीय सीमाओं के भीतर, जिसके लिए वह इस प्रकार प्राधिकृत है, –

(क) किसी ऐसे स्थान में, जिसमें उसके पास यह विश्वास

करने का कारण है कि इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किया गया है या किया जा रहा है, ऐसे सहायकों के साथ, यदि कोई हों, जिन्हें वह आवश्यक समझे, सभी उचित समयों पर, प्रवेश कर सकेगा और उसकी तलाशी ले सकेगा ;

(ख) कोई ऐसा विज्ञापन अथवा कोई ऐसी पुस्तक, पुस्तिका, कागज-पत्र, स्लाइड, फिल्म, लेख, रेखाचित्र, रंगचित्र, फोटोचित्र, रूपण या आकृति अभिगृहीत कर सकेगा, जिसके बारे में उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि वह इस अधिनियम के किन्हीं उपबंधों का उल्लंघन करती है ;

(ग) खंड (क) में उल्लिखित किसी स्थान में पाए गए किसी अभिलेख, रजिस्टर, दस्तावेज या अन्य किसी भौतिक पदार्थ की परीक्षा कर सकेगा और, यदि उसके पास यह विश्वास करने का कारण है कि उससे इस अधिनियम के अधीन दंडनीय किसी अपराध के किए जाने का साक्ष्य प्राप्त हो सकता है तो उसे अभिगृहीत कर सकेगा :

परन्तु इस उपधारा के अधीन कोई प्रवेश किसी प्राइवेट निवास-गृह में वारंट के बिना नहीं किया जाएगा :

परन्तु यह और कि इस उपधारा के अधीन अभिग्रहण की शक्ति का प्रयोग, किसी ऐसे दस्तावेज, वस्तु या चीज के लिए, जिसमें ऐसा कोई विज्ञापन अंतर्विष्ट है, उस दस्तावेज, वस्तु या चीज की अंतर्वस्तु सहित, यदि कोई हो, किया जा सकेगा, यदि वह विज्ञापन समुद्धृत होने के कारण या अन्यथा, उस दस्तावेज, वस्तु या चीज से, उसकी समग्रता, उपयोगिता या विक्रय मूल्य पर प्रभाव डाले बिना, अलग नहीं किया जा सकता है ।

(2) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) के उपबंध इस अधिनियम के अधीन किसी तलाशी या अभिग्रहण को, जहां तक हो सके, वैसे ही लागू होंगे जैसे वे उक्त संहिता की धारा 94 के अधीन जारी किए गए वारंट के प्राधिकार के अधीन ली गई किसी तलाशी या किए गए किसी अभिग्रहण को लागू होते हैं ।

(3) जहां कोई व्यक्ति उपधारा (1) के खंड (ख) या खंड (ग) के अधीन किसी वस्तु का अभिग्रहण करता है वहां वह यथाशक्य शीघ्र, निकटतम मजिस्ट्रेट को उसकी इत्तिला देगा और उस वस्तु की अभिरक्षा के संबंध में उससे आदेश प्राप्त करेगा ।

6. शास्ति – कोई व्यक्ति, जो धारा 3 या धारा 4 के उपबंधों का उल्लंघन करेगा, प्रथम दोषसिद्धि पर दोनों में से किसी भांति के कारावास से, जिसकी अवधि दो वर्ष तक की हो सकेगी, और जुर्माने से, जो दो हजार रुपए तक का हो सकेगा, तथा द्वितीय या पश्चात्वर्ती दोषसिद्धि की दशा में, कारावास से जिसकी अवधि छह मास से कम की नहीं होगी किन्तु जो पांच वर्ष तक की हो सकेगी, और जुर्माने से भी, जो दस हजार रुपए से कम का नहीं होगा किन्तु जो एक लाख रुपए तक का हो सकेगा, दंडनीय होगा ।

7. कंपनियों द्वारा अपराध – (1) जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी कम्पनी द्वारा किया गया है वहां प्रत्येक व्यक्ति जो उस अपराध के किए जाने के समय उस कंपनी के कारबार के संचालन के लिए उस कंपनी का भारसाधक और उसके प्रति उत्तरदायी था और साथ ही वह कंपनी भी ऐसे अपराध के दोषी समझे जाएंगे और तद्नुसार अपने विरुद्ध कार्यवाही किए जाने और दंडित किए जाने के भागी होंगे :

परन्तु इस उपधारा की कोई बात किसी ऐसे व्यक्ति को दंड का भागी नहीं बनाएगी यदि वह यह साबित कर देता है कि अपराध उसकी जानकारी के बिना किया गया था या उसने ऐसे अपराध के किए जाने का निवारण करने के लिए सभी सम्यक् तत्परता बरती थी ।

(2) उपधारा (1) में किसी बात के होते हुए भी, जहां इस अधिनियम के अधीन कोई अपराध किसी कंपनी द्वारा किया गया है तथा यह साबित हो जाता है कि वह अपराध कंपनी के किसी निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य अधिकारी की सहमति या मौनानुकूलता से किया गया है या उस अपराध का किया जाना उसकी किसी उपेक्षा के कारण माना जा सकता है वहां ऐसे निदेशक, प्रबंधक, सचिव या अन्य

अधिकारी के विरुद्ध कार्यवाही की जाएगी और तद्नुसार उसे दंडित किया जाएगा ।

स्पष्टीकरण -- इस धारा के प्रयोजनों के लिए, –

(क) "कंपनी" से कोई निगमित निकाय अभिप्रेत है और इसके अन्तर्गत फर्म या व्यष्टियों, का अन्य संगम भी है ; तथा

(ख) किसी फर्म के संबंध में, "निदेशक" से उस फर्म का भागीदार अभिप्रेत है ।

8. अपराधों का संज्ञेय और जमानतीय होना – (1) दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) में किसी बात के होते हुए भी, इस अधिनियम के अधीन दंडनीय अपराध जमानतीय होगा ।

(2) इस अधिनियम के अधीन दंडनीय कोई अपराध संज्ञेय होगा ।

9. सद्भावपूर्वक की गई कार्रवाई के लिए संरक्षण – इस अधिनियम के अधीन सद्भावपूर्वक की गई या की जाने के लिए आशयित किसी बात के लिए कोई भी वाद, अभियोजन या अन्य विधिक कार्यवाही केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार अथवा केन्द्रीय सरकार या किसी राज्य सरकार के किसी अधिकारी के विरुद्ध नहीं होगी ।

10. नियम बनाने की शक्ति – (1) केन्द्रीय सरकार इस अधिनियम के उपबंधों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, बना सकेगी ।

(2) विशिष्टतया और पूर्वगामी शक्ति की व्यापकता पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना, ऐसे नियमों में निम्नलिखित सभी या किन्हीं विषयों के लिए उपबंध किया जा सकेगा, अर्थात् :-

(क) वह रीति जिससे विज्ञापनों या अन्य वस्तुओं का अभिग्रहण किया जाएगा और वह रीति जिससे अभिग्रहण-सूची तैयार की जाएगी और उस व्यक्ति को दी जाएगी जिसकी अभिरक्षा से कोई विज्ञापन या अन्य वस्तु अभिगृहीत की गई है ;

(ख) कोई अन्य विषय जो विहित किया जाना अपेक्षित है या विहित किया जाए ।

(3) इस अधिनियम के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने के पश्चात् यथाशीघ्र, संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् वह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।

———

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	290.00
4.	मानव अधिकार – डा. शिवदत्त शर्मा – 2006	340	120	60.00
5.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान (सिंधी भाषा में)	1998	कीमत रु. 45/-
4. बहुभाषी संविधान शब्दावली	1986	कीमत रु. 12/-
5. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

Website : www.lawmin.nic.in

Email : am.vsp-molj@gov.in

Collate IV

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 17552/69

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं – **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के चयनित क्रमशः सिविल और दांडिक निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका को उपादेय और ज्ञानवर्द्धक बनाने के लिए प्रिवी कौंसिल के निर्णयों को भी समाविष्ट किया जा रहा है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को आन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/ product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन

(विधायी विभाग)

विधि और न्याय मंत्रालय

भारत सरकार

भारतीय विधि संस्थान भवन,

भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001

दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in